## BVP Prakashan

**National President**
**Dr. Suresh Chandra Gupta**
M. : 94153-34709 (Farrukhabad)

**National Vice President (H.Q.)**
**Shyam Sharma**
M. : 98290-38190 (Kota)

**National Secretary General**
**Ajay Dutta**
M. : 94170-16915 (Chandigarh)

**National Finance Secretary**
**Om Prakash Kanoongo**
M. : 93222-95253 (Mumbai)

**Advisor - Prakashan**
**Atam Dev**
M. : 98185-32131 (Delhi)

**Advisor Gyan Prabha**
**Suresh Chandra**
Ph.: 75794-57994 (Dehradun)

**National Vice Chairman Prakashan**
**Mahesh Sharma**
M. : 98111-05568 (Delhi)

**Editor Gyan Prabha**
**Dr. Champa Srivastava**
M. : 93360-04691


© सर्वाधिकार सुरक्षित


**प्रकाशन : भारत विकास परिषद्**
भारत विकास भवन
बी डी ब्लॉक
डीडीए मार्केट के पीछे
पावर हाउस मार्ग
पीतमपुरा, दिल्ली–110034

फोन : 011–27313051, 27316049
इमेल : bvp@bvpindia.com
वेबसाईट : www.bvpindia.com
संस्करण : 2019


**आवश्यक सूचना :**
ज्ञान प्रभा में छपे सभी लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के हैं, इनसे सम्पादक अथवा प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

● सम्पर्क ● सहयोग ● संस्कार ● सेवा ● समर्पण


**Oct.-December 2019**
**Year 16th : Issue 4th**

अक्टूबर – दिसम्बर 2019
वर्ष षष्ठदश – अंक चतुर्थ


# GYAN PRABHA
## (Quarterly)

# ज्ञान प्रभा
(त्रैमासिक)

53


सम्पादक
**डॉ0 चम्पा श्रीवास्तव**
मो0 9336004691

सह सम्पादक
**शकुन प्रसाद पाण्डेय**
मो0 9451319144



मूल्य : 60/– रुपये वार्षिक : 200/– रुपये आजीवन : 2000/– रुपये

**भारत विकास परिषद् प्रकाशन**
स्वस्थ–समर्थ–संस्कारित भारत ✶ *Swasth-Samarth-Sanskarit Bharat*

# अनुक्रमणिका


| क्रम सं0 | विषय | लेखक | पृष्ठ सं0 |
|---|---|---|---|
| 1. | सम्पादकीय | डॉ0 चम्पा श्रीवास्तव | 3 |
| 2. | भारत में संसदीय लोकतंत्र की सार्थकता | डॉ0 रवि प्रताप सिंह | 5 |
| 3. | स्वतंत्रता एवं समानता | बहादुर सिंह रावत चंचल | 14 |
| 4. | भारतीय परिप्रेक्ष में धर्मनिरपेक्षता | कृष्ण कुमार | 24 |
| 5. | भारतीय दर्शन | बसन्ती हर्ष | 29 |
| 6. | भगवान महावीर की विश्व को देन | अचल चंद्र जैन | 32 |
| 7. | 1942 की रानी झांसीः अरूणा आसफ अली | आकांक्षा यादव | 34 |
| 8. | कन्नौजी लोक संस्कृति और लोकगीत | कृष्ण कान्त दुबे | 37 |
| 9. | विभिन्न देवतागण एवं उनके वाहन | श्रीमती उमा मेहता | 44 |
| 10. | बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ | रजनी सिंह | 47 |
| 11. | एक वृक्ष 10 पुत्र समान | सौजन्यः युग निर्माण योजना | 53 |
| 12. | भारतीय समाज में पिता की अवधारणा | डॉ0 शारदा मेहता | 56 |
| 13. | निकोबारी लोककथाओं मे............. | डॉ0 व्यास मणि त्रिपाठी | 58 |
| 14. | लोक जीवन की गाथा हैः हरेली पर्व | डॉ0 फूलदास महन्त | 64 |
| 15. | जैविक खेती बनाम रासायनिक खेती | डॉ0 वीरेन्द्र कुमार | 67 |
| 16. | राष्ट्रीय मिलेट वर्ष | डॉ0 राजेन्द्र बहादुर श्रीवास्तव | 69 |
| 17. | सेवा का सबसे बड़ा संगठनः स्काउटिंग | दया शंकर | 75 |
| 18. | मीराबेन एक विलक्षण व्यक्तित्व | सौजन्यः युग निर्माण योजना | 78 |
| 19. | Religion - MEANING OF SPIRITUALITY | Suresh Chandra | 82 |
| 20. | Swami Vivekananda and Mahatma Gandhi : Truth is One, Paths are Diverse | Uma Majmudar | 86 |


OOO

# संपादकीय

❑ डॉ0 चम्पा श्रीवास्तव

''चला जाता है हँसता खेलता मंजिल पे अपनी वो।
अगर आसानियाँ हों, जिन्दगी दुश्वार हो जाये।।''

उपर्युक्त पंक्तियाँ जीवन और जगत की समस्त चुनौतियों को स्वीकार करने हेतु प्रेरित एवं प्रोत्साहित करती हैं। चुनौती स्वीकार करने वाला व्यक्ति ही जीवन में कुछ कर पाने में सफलता की प्राप्ति करता है। जो हाथ पर हाथ रखकर निराश होकर बैठ जाता है वह न आगे बढ़ पाता है और न ही मंजिल प्राप्त करने में समर्थ हो पाता है। चुनौतियाँ तो पल–पल और पग–पग पर हमारे समक्ष प्रस्तुत होती रहती हैं। हमारा यह धर्म है कि हम उनसे डर कर भागे नहीं, वरन उन पर विजय प्राप्त करने का संकल्प करके उनका सामना करते हुए सफलता का वरण करें। भारत के एकीकरण एवं विश्व बन्धुत्व की भावना को मानवीयता का श्रृंगार बनाने हेतु भारत के विभिन्न अंग जम्मू कश्मीर से अनुच्छेद 370, 35ए तथा नारी की अस्मिता की रक्षा एवं सुरक्षा के लिए तीन तलाक को समाप्त करना आज के इस वैषम्यपूर्ण वातावरण के लिए निश्चित ही दृढ इच्छाशक्ति की आवश्यकता थी किंतु संकल्पनिष्ठ प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने उस असम्भव को सम्भव में परिवर्तित करके भावी समाज के लिए इतिहास पुरुष बन गए। यह सत्य है कि अंधेरा कितना भी घना हो चाहिए बस एक लौ, कोहरा कितना भी घना हो चाहिए बस एक किरण। विश्वामित्र ने ब्राह्मणत्व की प्राप्ति हेतु अपने समय और समाज की प्रत्येक चुनौती का सामना करते हुए अपने उद्देश्य को प्राप्त किया था। उन्हें विचलित करने के लिए देवी–देवताओं ने पूर्ण शक्ति का उपयोग करके विश्वामित्र को विचलित करना चाहा था किंतु जहाँ संकल्प होता है, वहां विषमताएं नतमस्तक हो जाती हैं और मानव सत्य पथ का वह दीपक बन जाता है जो चतुर्दिक अंधकार को प्रकाशमय बना देता है।

अपने प्रधानमंत्रित्व काल के मात्र उन्नीस माह में देश की भलाई के लिए संकल्पित लाल बहादुर शास्त्री ने प्रत्येक चुनौती को सहर्ष स्वीकार करके अपने देश के लिए जो कर दिखाया, वह किसी चमत्कार से कम नहीं है। सत्य और अहिंसा के आराधक मोहनदास करमचंद्र गाँधी प्रत्येक चुनौती को स्वीकार करके राष्ट्रपिता की महान पद्वी से विभूषित हुए थे। इतिहास साक्षी है कि स्वामी विवेकानंद, युग पुरुष गुरू गोविन्द सिंह, गुरू तेग बहादुर, भगवान के रूप में

पूजित महावीर स्वामी तथा स्वामी रामतीर्थ दीन दयाल उपाध्याय एवं अटल बिहारी बाजपेयी चुनौतियों को स्वीकार करने में कभी पीछे नहीं रहे। वे इस तथ्य से अवगत थे कि प्रत्येक चुनौती किसी महान कार्य को करने के संकल्प की अपेक्षा करती है। जो उसे स्वीकार कर लेते हैं वे इतिहास पुरुष बन कर स्वयं ही चुनौती बन जाते हैं। उस समय विरोधी शक्तियाँ उन्हें सफल न होने देने के लिए साम, दाम, दण्ड और भेद के समस्त मार्ग अपनाती हैं किंतु दायित्ववान तथा ईमानदार सच्चे धर्मसाधक को विश्व की कोई भी शक्ति विचलित नहीं कर सकती। सच्चा राष्ट्रसेवी न कभी टूटता है और न ही झुकता है वरन् परिस्थितियों को ही मजबूर कर देता है कि वे उसके समक्ष घुटने टेक दें। मनुष्य की समस्त विकासात्मक प्रवृत्तियों को उत्कर्ष पर ले जाने की सामर्थ्य चुनौती भरे जीवन में ही होती है। हमें स्मरण रखना चाहिए कि दृढ़ प्रतिज्ञ कर्मठ जीवन ही सफलता का श्रृंगार है। स्वयं के द्वारा वरण किये हुए लक्ष्य के प्रति पूर्णतः समर्पण ही मानव को महामानव बनाता है। एक बात और उल्लेखनीय है कि जीवन की चुनौतियों को हर्षित भाव से स्वीकार किया जाये तभी समाज मुस्कान से अभिमंडित हो पायेगा। हर्षित भाव समर्पण के सहारे ही भगत सिंह तथा राम प्रसाद बिस्मिल जैसे क्रांतिकारी युवाओं ने फांसी के तख्ते पर चढ़कर मृत्यु का वरण ही नहीं किया अपितु चुनौती स्वीकार्यता का पावन संदेश भी दिया था जैसे दीपक स्वयं जलकर समाज को आलोकित करता है, बीज स्वयं गलकर सेवा भावी वृक्ष बनता है तथा जल से भरा हुआ बादल बरसकर सृष्टि को हरीतिका, सरसता एवं शीतलता से अभिमंडित करता है वैसे ही आदर्श पुरुष स्वयं का सर्वस्व समर्पित करके भी विश्व मंगल भाव को समाज को सौंप देता है। मुस्कान मात्र शिष्टाचार नहीं वरन् एक ऐसा आभूषण है जो कुरूपता को सौन्दर्य प्रदान करता है तथा रूपवान के मुखमण्डल पर चार चाँद लगा देता है।

इन्हीं शब्दों के साथ दशहरा, दीपावली, भैया दूज तथा रामनवमी जैसे पर्व तथा राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी, लाल बहादुर शास्त्री, जवाहर लाल नेहरू, गुरू नानक, राम प्रसाद बिस्मिल एवं मदनमोहन मालवीय की प्रेरक जयन्तियाँ आपके जीवन को मुस्कान से अभिमंडित करके चुनौतियों का सामना करने की सामर्थ्य प्रदान करें, यही मेरी ईश्वर से प्रार्थना है। ज्ञान–प्रभा का 53वाँ पुष्प, चिंतन पुष्प के रूप में आपके स्नेहिल सुझावों की प्रतीक्षा में समर्पित है।

**डॉ0 चम्पा श्रीवास्तव**

ooo

# भारत में संसदीय लोकतंत्र की सार्थकता

❑ डॉ0 रवि प्रताप सिंह

स्वाधीनता के पश्चात् भारत में संसदीय प्रजातांत्रिक शासन– प्रणाली को अपनाया गया है। लोकतंत्र के इस संसदीय प्रतिमान में व्यक्ति, शासक अभिजनों का चुनाव करता है। इस व्यवस्था में जनता द्वारा अपने शासकों का चुनाव एक निश्चित अवधि के लिए किया जाता है। इन निर्वाचित प्रतिनिधियों का मुख्य ध्येय अपने संसदीय क्षेत्र की जनता का जीवन खुशहाल बनाना होता है। स्वाधीन भारत में निर्वाचित जनप्रतिनिधि जनता के कल्याण के लिए प्रतिबद्ध रहते हैं। भारतीय संविधान कल्याणकारी राज्य की प्रतिस्थापना करता है। संविधान सभा में राज्य की प्रकृति पर वाद–विवाद करते हुए डॉ अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय एवं सामाजिक परिवर्तन को राज्य का मुख्य उद्देश्य बताया। राज्य की शासन–प्रणाली को सामाजिक परिवर्तन का अभिकर्ता बनाया गया है।

उपनिवेशवाद के घोर अंधकार के पश्चात स्वतंत्र भारत की नई संसदीय सरकार ने राज्य की सामाजिक आकांक्षाओं की पूर्ति करने का प्रयत्न किया है। संसदीय शासन प्रणाली अपनाने के कारण वंचित वर्गो के उत्थान एवं बहुमुखी विकास के लिए सरकार द्वारा प्रतिबद्धता समय–समय पर दुहराई जाती है। स्वतंत्रता के पश्चात् संविधानविदों ने भारत की विशिष्ट सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए विशेष उपबन्धों की व्यवस्था की है। भारतीय संविधान ने जनकल्याण पर आधारित सार्वजनिक लक्ष्यों पर जोर दिया है ताकि आम भारतीय जनता लाभान्वित हो।

भारतीय लोकतंत्र की सबसे उल्लेखनीय उपलब्धि देश को एकीकृत करना है। इस एकीकरण का कार्य सरदार पटेल के शक्तिशाली नेतृत्व में किया गया भारतीय लोकतंत्र की निरंतरता तब से आज तक अनवरत बनी हुई है। भारत की संवैधानिक संस्थाओं ने भारतीय गणतंत्र को अतिवाद एवं दक्षिणपंथी रुझानों से बचाया है। भारत सरकार द्वारा सबका साथ एवं सबका विकास नीति कार्यान्वित की जा रही है।

यह सर्वविदित है कि भारतीय लोकतंत्र का उद्देश्य समावंशी विकास एवं सर्वजन सुखाय है। संविधान के इस जनहितकारी भावना से भारतीय गणतंत्र का अन्तिम व्यक्ति भी अपने संसदीय व्यवस्था में सहयोगी होने की अनुभूति करता है। भारत के शासक अभिजनों ने अपनी नीतियों में आर्थिक उत्थान की शुरूआत

की आजादी के समय जनता के लिए पर्याप्त अन्न प्रबंधन में भी अपने आप में एक चुनौती थी। इस चुनौती को हमारी सरकारों ने स्वीकार किया और भारत को अन्न उत्पादन में स्वावलम्बी बनाया। इतना ही नहीं गरीबी रेखा से नीचे निवास करने वाले व्यक्तियों का विशेष ध्यान रखा गया। इस दिशा में वस्तु एवं सेवा कर लाना एक महत्वपूर्ण पड़ाव है।

भारत का राजनीतिक नेतृत्व, नीति निर्माता और कारोबारी मस्तिष्क 21वीं सदी में देश को प्रमुख आर्थिक शक्ति बनाने की मजबूत आकांक्षा से प्रेरित है पर्याप्त विदेशी विनमय भण्डार तथा आर्थिक वृद्धि की उच्च दर ने उनमें आत्मविश्वास का संचार किया है।

**सूचना का अधिकार–**

भारतीय संसदीय प्रणाली में पिछले कई दशकों में सार्वजनिक संस्थाओं जैसे– न्यायपालिका, चुनाव आयोग,लेखा परीक्षक और कुछ सार्वजनिक निकाय लोकतांत्रिक प्रक्रिया को सुदृढ़ कर रही है। साधारण जनता को प्रदत्त सूचना का अधिकार उनके सशक्तीकरण की दिशा में एक और महत्वपूर्ण कदम है यह अधिकार लोकतंत्र को सुदृढ़ एवं जनोपयोगी बनाने में सहायक है। **सूचना का अधिकार** विकास को बनाए रखने, गरीबी को कम करने में और न्यायसंगत आर्थिक संवृद्धि को प्राप्त करने में सहायता करता है। सूचना का अधिकार गरीब समुदायों को अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने में सहायक होता है, गरीबी निवारण से सम्बन्धित रणनीति में सबकी राजनीतिक भागीदारी की जरूरत होती है, ताकि सरकार में जवाबदेही और पारदर्शिता विकसित की जा सके इतना ही नहीं सूचना के अधिकार के माध्यम से शासन में पारदर्शिता स्थापित की जा रही है। आम जनता द्वारा इस अधिकार का प्रयोग कर शासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को दूर किया जा रहा है यह अधिनियम भ्रष्टाचार से लड़ने में मदद करता है। भ्रष्टाचार जनता के हितों के लिए और आधारभूत संरचना के लिए आवंटित किए गये बजटीय प्रावधानों को भी निगल जाता है। यह जनसेवाओं को दयनीय बनाता है जैसे कि सरकारी स्वास्थ्य केन्द्रों में दवाएं या जाँच सेवाएं प्रायः उपलब्ध नहीं होती हैं। सूचना का अधिकार लालफीताशाही भाई भतीजावाद, प्रशासकीय भ्रष्टाचार से लड़ने में सहायता करता है यह सर्वविदित है कि, सूचना का अधिकार मीडिया लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ है। यह भारतीय लोकतंत्र की जागरुकता का प्रतीक है।

हर्ष मन्दर और आभा जोशी के अनुसार ''भारत में सूचना के अधिकार से संबंधित आन्दोलन की महत्वपूर्ण विशिष्टता यह है कि इसमें गरीब और वंचित

लोगों के न्याय और अस्तित्व के लिए संघर्ष और सरोकार गहरे रुप में समाया हुआ है।''

**नागरिक जीवन को श्रेष्ठ बनाने का प्रयासः—**

इतना ही नहीं भारत की लोक—कल्याणकारी सरकार द्वारा युवाओं के लिए रोजगार का सृजन हर वर्ष किया जा रहा है। सरकार के इस प्रयास से नवयुवकों के मध्य खुशहाली उत्पन्न हो रहीं है। हालांकि जनसंख्या अधिकता के कारण नागरिकों और रोजगार के मध्य अनुपात सही नहीं है। भारत जैसे विकासशील एवं विशाल देश के लिए उपरोक्त अनुपात भी संतोषजनक है। भारत सरकार द्वारा समावेशी समाज का निर्माण किया जा रहा है, ताकि वंचित वर्ग भी विकास की मुख्य धारा में शामिल हो जाए। इस दिशा में मुश्किल कार्य समाज के हाशिए के तबके के लोगों को और अधिक उत्पादक बनाने के लिए मजबूत करना है। इस दिशा में भारत को शिक्षा, स्वास्थ्य, सेवा, शहरी परियोजना, जन परियोजना, कचरा प्रबंधन और ग्रामीण आवास के क्षेत्रों में नवाचार की जरूरत है। भारत की संसदीय सरकार द्वारा नागरिक समाज को सुदृढ़ किया जा रहा है।

प्रत्येक नागरिक के जीवन व सम्पत्ति की सुरक्षा भारत सरकार का प्रमुख दायित्व है भारतीय गणराज्य आपराधिक तत्वों की ओर से गम्भीर चुनौतियों का सामना कर रहा है। जम्मू व कश्मीर में आतंकवादी सक्रिय हैं। आतंकवादियों एवं चरमपंथियों द्वारा भारतीय राजनीतिक संरचना को असफल चुनौती दी जा रही है, भारत में नक्सलवाद द्वारा भी भारत की राजनीतिक संरचना को चुनौती दी जा रही है। भारतीय सरकार द्वारा इन अराजक तत्वों के प्रति जनता को जाग्रत किया जा रहा है, भारत सरकार द्वारा इन अशांत क्षेत्रों में सामाजिक कल्याण के लिए अनेक कल्याणकारी कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।

**ग्रामीण विकास**

भारत सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए ग्रामीण उद्यमशीलता को प्रोत्साहित किया जा रहा है ग्रामीण जनता की कार्य कुशलता बढ़ाने के लिए मुद्रा कार्यक्रम को अपनाया गया है। इस योजना के तहत रु0 10 लाख तक ऋण— उपलब्ध कराये जा रहे हैं। इस कार्यक्रम के माध्यम से ग्रामीण जनता को आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। भारत सरकार द्वारा प्रधानमंत्री ग्रामीण साक्षरता अभियान शुरु किया गया है। यह ग्रामीण शिक्षा के लिए एक क्रांतिकारी कदम है। यह विश्व के डिजिटल कार्यक्रमों में एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम है इस कल्याणकारी कार्यक्रम का उद्देश्य 2019 तक ग्रामीण भारत में डिजिटल साक्षरता

का प्रसार करना है। समावेशी विकास के लिए डिजिटल समावेशन को प्रोत्साहित किया जा रहा है। सरकार द्वारा ग्रामीणों के उत्थान के लिए मार्च 2019 तक का लक्ष्य रखा गया है, इस कार्यक्रम के अन्तर्गत **जनधन खाता, डेबिट कार्ड आधार भुगतान** जैसे–उपायों को लोक प्रिय बनाया जा रहा है ताकि ग्रामीण जनता को बिचौलियों से मुक्त कराया जा सके। डिजिटल लेन–देन से सरकारी कार्यक्रम का लाभ सीधे लाभार्थियों के खातों में अंतरित किया जाता है। इस अंतरण या आर्थिक हस्तांतरण में माध्यमों की भूमिका समाप्त हो गई है। आम जनता को उसके श्रम का वास्तविक प्रतिफल मिल रहा है, यह भी हमारी सरकार की प्रमुख उपलब्धियों में से है।

**नारी उत्थान**

संसदीय प्रणाली के माध्यम से नारी उत्थान के लिए अनेक कार्यक्रमों का शुभारम्भ किया गया, सन् 1980 में सेंटर फॉर वीमेन स्टडीज की स्थापना की गई इस संस्था के माध्यम से महिला उत्थान के नित नये आधारों पर चर्चा की गई। कालांतर में महिला मुद्दों को शासकीय नीति में शामिल करने के लिए राष्ट्रीय महिला आयोग 1990 अस्तित्व में आया। अन्तर्राष्ट्रीय महिला दशक (1975–1985) के दौरान महिलाओं के प्रति हिंसा, बलात्कार, यौन शोषण और दहेज हत्या के ऐसे अनेक मामले आए जिनके खिलाफ महिला संगठनों ने एकजुट होकर आन्दोलन किया। भारत की संसदीय शासन प्रणाली ने महिलाओं के मुद्दे पर भावात्मक रुख अपनाया और नारी कल्याण के लिए अनेक कार्यक्रम बनाए जैसे स्वावलम्बन योजना, कामकाजी महिलाओं हेतु **हॉस्टल, स्वाधार योजना** आदि शामिल हैं। भारत सरकार द्वारा 2006 में महिलाओं के उत्थान के लिए समर्पित महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की स्थापना की गयी। इतना ही नहीं सरकार द्वारा 2005 में **घरेलू हिंसा अधिनियम 2005** बनाया गया। सन् 2005 में ही उत्तराधिकार कानून में संशोधन किया गया जिसके तहत पैतृक सम्पत्ति में बेटियों को भी बेटों के समान ही उत्तराधिकार प्रदान किया गया। भारत सरकार द्वारा महिला हितों के संवर्धन के लिए 2004–2005 से लिंग आधारित बजट का शुभारम्भ किया गया। इस व्यवस्था के तहत बजट में लैंगिक भेदभाव को दूर किया गया। वर्तमान समय में 56 मंत्रालय और विभागों में लिंग आधारित बजट इकाइयों का शुभारम्भ किया गया है।

**सामाजिक न्याय**

भारतीय संसदात्मक सरकार द्वारा सामाजिक न्याय की अवधारणा को प्रोत्साहित किया गया है। भारत एवं पाश्चात्य देशों के चिंतन –पद्धति में

सामाजिक न्याय पर गम्भीर चिंतन किया गया है। अरस्तू, प्लेटों, कांट, वेथम, रॉल्स आदि विद्वानों ने वंचित वर्गों की भागीदारी शासन संरचना में बढाने के लिए सामाजिक न्याय एवं समता की गम्भीर वकालत की। भारत में महिलाओं की स्थिति बहुत दयनीय है। यद्यपि महिलाओं एवं वंचित वर्ग के उत्थान के लिए भारत सरकार द्वारा अनेक कानून बनाये गये हैं। भारत में नारियों को धर्म, परम्परा एवं कुल–प्रतिष्ठा को इज्जत का प्रतीक माना जाता है। एक स्त्री जटिल भारतीय सामाजिक व्यवस्था से लड़कर राजनीतिक एवं सामाजिक अधिकारों की प्राप्ति करती है। भारतीय संविधान ने देश के प्रत्येक नागरिक को समानता का अधिकार दिया है। समानता, स्वतंत्रता और न्याय का अधिकार पुरुष–महिला दोनों को समान रुप से दिया गया है। महिलाओं एवं वंचित वर्गों के उत्थान के लिए सकारात्मक पक्षपात किया जाता है। बिहार में लड़कियों के लिए **साइकिल और पोशाक योजना, मध्य प्रदेश में लड़कियों के लिए लाडली लक्ष्मी योजना और दिल्ली में मेट्रो में महिलाओं के रिर्जव कोच** की व्यवस्था आदि करना इसके उदाहरण हैं। अनुच्छेद 23 नारी गरिमा की रक्षा करते हुए उनको शोषण मुक्त जीवन का अधिकार देता है। वर्तमान समय में महिलाओं की ट्रैफिंकिग, वेश्यावृत्ति एवं भीख मांगने पर मजबूर करना दंडनीय अपराध घोषित किया गया। संसद ने अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956 में पारित किया है। **भारतीय दंड संहिता** के अनुसार ऐसे अपराधी को 7 साल से 10 साल तक की कैद ओर जुर्माने की सजा भुगतनी पड़ सकती है। 14 साल से कम उम्र के लड़के या लड़कियों से काम करवाना बाल अपराध घोषित किया गया है। भारत सरकार द्वारा महिलाओं के हितों की रक्षार्थ विशाखा गाइडलाइंस बनाया गया है। इस अधिनियम के तहत् महिलाओं को कार्यस्थल पर सुरक्षित वातावरण प्रदान किया गया है। भारत की संसदीय सरकार द्वारा महिला ई–हाट, उज्जवला योजना, बेटी बचाओ– बेटी पढ़ाओ, सुकन्या स्मृद्धि योजना, प्रधानमंत्री उज्जवला योजना, स्टेप आदि योजनाओं के माध्यम से नारियों को सशक्तीकरण करने का प्रयास किया जा रहा है।

### अल्पसंख्यक कल्याण

भारत की संसदीय शासन प्रणाली द्वारा अल्पसंख्यक कल्याण मंत्रालय की स्थापना की गई। इस मंत्रालय द्वारा अल्पसंख्यकों के उत्थान के लिए नित नये संवैधानिक प्रावधानों की व्यवस्था सरकार द्वारा की गई है। भारत की संसदीय सरकार द्वारा **नया सवेरा, निःशुल्क कोचिंग, नयी उड़ान, नयी मंजिल, उस्ताद, हुनर, हाट पर, नई रोशनी, जियो पारसी, सीखो और कमाओ,**

**हमारी धरोहर योजना,** के माध्यम से अल्पसंख्यकों के उत्थान के लिए भारत सरकार द्वारा प्रोत्साहित किया जाता है।

## दलित उत्थान

संविधान में अनेक ऐसे प्रावधान किए गए हैं जिसमें समाज में जाति के आधार पर भेदभाव न हो। भारत सरकार द्वारा सामाजिक न्याय को संविधान की आत्मा के रुप में प्रस्तुत किया गया है। भारत सरकार द्वारा संविधान के तहत भारतीय समाज को संरक्षणात्मक विभेदीकरण का ढांचा प्रदान किया गया। इन संवैधानिक उपबन्धों के तहत् दलित एवं पिछड़े वर्गों को विशेष संरक्षण प्रदान किया गया है। इस संरक्षण के कारण दलित जातियों में आत्मविश्वास बढ़ा और ये जातियाँ राज्य की निर्णयन प्रक्रिया में सहभागी बनी। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में समानता, आर्थिक न्याय एवं समाजवाद स्थापित करने का लक्ष्य निर्धारित है। संसदीय शासन प्रणाली के तहत् इन लक्ष्यों को पूरा किया जा रहा है। भारतीय शासन–प्रणाली वंचित एवं पिछड़े वर्गों के उत्थान के लिए पुरजोर प्रयासरत है। 86वें संविधान संशोधन द्वारा 6 से 14 वर्ष की आयु के बच्चों के लिए मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान हैं। भारत में पंचायती राज संस्थाओं का सुदृढ़ीकरण कर इस संस्था को सामाजिक एवं आर्थिक रूप से निर्बल वर्गों के उत्थान के प्रति उन्मुख बनाया गया है।

## अनुसूचित जनजाति एवं जातियों का हित संरक्षण–

भारतीय संविधान में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियों के उत्थान के लिए अनुच्छेद 15. 15(4), 16(5), 17 के तहत सुरक्षात्मक उपबन्ध अपनाया गया है। इतना ही नहीं भारतीय संसदीय शासन–प्रणाली शासन में प्रत्यक्ष भागीदारी के लिए व्यवस्था की गई है दलित एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए लोक सभा एवं राज्य विधान मंडलों में स्थान सुरक्षित किए गए हैं। अनुसूचित जातियों के लिए एक आयोग की स्थापना का उपबंध किया गया है। राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग का समावेशन किया गया। इस आयोग का कार्य अनुसूचित जनजातियों के हितों के संरक्षण के साथ साथ इन वंचित वर्गों का भारतीय संसदीय प्रणाली में सक्रिय सहभागी बनाना है। यह आयोग भारत में संसदीय व्यवस्था के तहत प्रदत्त अधिकारों का प्रयोग कर सामाजिक क्षमता स्थापित करने का प्रयत्न करता है।

## समालोचना–

भारत की संसदीय व्यवस्था में निरंतर नए एवं गतिशील, प्रजातांत्रिक मूल्यों

का समावेश है। इस कारण क्षणिक संकटों के बावजूद भारतीय राजनीतिक व्यवस्था प्रगतिशील हैं। जेम्स मैनर का मानना है कि भारत की संसदीय प्रणाली को दो धाराओं में प्रभावित किया है। ये धाराएं क्रमशः जागृति एवं स्खलन है। जागृति से तात्पर्य समाज के सभी वर्गों। गरीब–अमीर, सम्पन्न विपन्न में मुक्त प्रतिनिध्यात्मक राजनीतिक समझ के दायरे का प्रसार किया जाए। संसदीय शासन प्रणाली के तहत् शासक अभिजन का उद्देश्य हाशिये पर स्थित विपन्न जनता का कल्याण करना शासन का यह कल्याणकारी कार्य समस्त जनता के लिए भेदभाव रहित है। शासक अभिजन एवं जनता के मध्य इस अंतक्रिया के कारण हाशिये पर अवस्थित जनता में चेतना जाग्रत होती है। इस निरंतर बढ़ती चेतना के कारण ही अनेक उत्थानकारी दबाव समूहों का उदय हुआ है जैसे– पश्चिमी उत्तर प्रदेश में भीमसेना का उदय। इस तरह के दबाव समूह भारत में वंचित वर्गों को अपने अधिकार के प्रति जागरूक बनाते हैं। वर्तमान समय में राजनीतिक संस्थाओं का संसदीय व्यवस्था में क्षरण हो रहा है, अर्थात् ये शासक अभिजन वंचित वर्गों के प्रति समर्पित एवं उत्तरदायी नहीं हैं। सम्भवतः इसीलिए प्रख्यात राजनीतिशास्त्री श्री रूडोल्फ ने भारत के संसदीय शासन प्रणाली को विरोधाभास की संज्ञा दी है। श्री रूडोल्फ का मानना है कि भारत के शक्तिशाली राज्य तो है परन्तु राज्य में परिवर्तन एवं सामाजिक न्याय के प्रति प्रतिबद्ध नहीं है। भारतीय संविधान द्वारा नागरिकों को सार्वभौमिक व्यस्क मताधिकार प्रदान किया गया है लेकिन व्यावहारिक रुप से देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग आज भी शासन प्रक्रिया एवं संरचना के प्रति उदासीन है। प्रख्यात राजनीतिशास्त्री प्रो0 रजनी कोठारी ने भारत की शासन प्रणाली को जेनस लाइक प्रतिमान (Janus Like Model) कहा है। वह सर्वविदित है कि जेनस एक ऐसा समुद्री जानवर होता है, जिसके आगे और पीछे दोनों आँखें होती हैं और वह दोनों ओर एक साथ देखता है भारतीय संसदीय प्रणाली को इस जानवर से उपमा देने का अर्थ यह है कि वर्तमान शासन प्रणाली में वंचित वर्गों के प्रति पूर्ण रूपेण उत्तरदायी नहीं बन पाई है। आज भी दलितों, वंचित वर्गों को अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है। पामर ने इसी तथ्य की ओर इंगित करते हुए लिखा है कि भारत का राजनीतिक स्वरुप अभी भी अस्तित्व में आने की पक्रिया में है। भारतीय राजनीति का राजनीतिकरण अभी भी जारी है।

सम्भवतः इन्हीं विरोधाभासों को दूर करने के लिए **मूल अधिकारों एवं नीति निर्देशक तत्वों** का समावेश संविधान में किया गया है। स्वतंत्रता के पश्चात् लोक– कल्याणकारी एवं कार्य वर्तमान संस्कारों द्वारा किया जा रहा है, ताकि

समाज में विषमताओं का उन्मूलन किया जा सके। जैसे सन् 1961 में पारित मातृत्व लाभ अधिनियम के माध्यम से सेवारत् महिलाओं के हितों की रक्षा की गई है। इस अधिनियम के तहत् प्रसव से एक निर्धारित अवधि पहले अथवा वाद में गर्भवती नारियों के लिए मातृत्व अवकाश तथा कुछ आर्थिक लाभ का प्रावधान है। भारतीय सरकार ने महिलाओं के उत्थान के क्रम में पुरुषों एवं महिलाओं को समान कार्य के लिए समान वेतन की व्यवस्था की है। इस अधिनियम द्वारा अनेक लोककल्याणकारी कार्य किया गया है जैसे –अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों को वित्तीय सहायता प्रदान की गयी है।

यह सर्वविदित है कि स्वाधीनता के प्रारम्भिक वर्षों में भारतीय शासन तंत्र द्वारा आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में निरन्तर हस्तक्षेप किया गया। इस दौर में जनता को प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए राज्य की भूमिका हस्तक्षेपकारी रही। प्रख्यात विद्वान मनोरंजन मोहंती का अभिमत है कि भारत में संसदीय शासन–प्रणाली आमजन अथवा हाशिए पर स्थित जनता की आकांक्षाओं को अपने उदारवादी लोकतांत्रिक एजेंडे के तहत पूरा करने में आंशिक सफल रही है।

इतना ही नहीं भारतीय शासन–प्रणाली के तहत 24 जुलाई, 1991 को नई उद्योग नीति की घोषणा की गई। गुरु चरणदास ने 24 जुलाई , 1991 के दिन को आर्थिक आजादी के रुप में रेखांकित किया है। 24 जुलाई, 1991 में भारतीय शासन–संरचना द्वारा उदारीकरण का शुभारम्भ किया गया। उदारीकरण के पश्चात् भारतीय शासन तंत्र जनता के प्रति ज्यादा उत्तरदायी शासन–प्रणाली द्वारा राजकीय विद्यालयों में ज्यादा नामांकन के लिए 1995 में **पोषाहार और मध्यान्ह योजना** का शुभारम्भ किया गया। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के अनुसार सभी नागरिकों को पूर्ण मानवीय गरिमा के साथ जीवन जीने का अधिकार प्राप्त है। जीवन हेतु भोजन सबसे महत्वपूर्ण एवं मूलभूत आवश्यकता है। भारत की संसदीय व्यवस्था नागरिकों को जीवन गरिमामयी ढंग से निर्वाह करने का अधिकार प्रदान करता है। भारत की शासन –संरचना द्वारा नागरिकों को राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा प्रदान की गई है। यह भारतीय राज्य की संसदीय व्यवस्था का लोक–कल्याणकारी कदम है।

भारत सरकार द्वारा मनरेगा सन् 2006 में लागू किया गया। इस अधिनियम के माध्यम से ग्रामीण भारत में निवास करने वाली जनता को अपने ग्रामों में रोजगार प्रदान कर सामाजिक सुरक्षा प्रदान की गई। यह योजना गरीबी–उन्मूलन एवं निर्धन वर्ग के कल्याण के लिए समर्पित है। भारत की

संसदीय–शासन प्रणाली ने **मनरेगा** जैसे जन–उपयोगी कार्यक्रमों को लागू करके भारतीय शासन संरचना को कल्याणकारी एवं जन उपयोगी बनाया है। मनरेगा जैसे कार्यक्रमों ने ग्रामीण भारत एवं शहरी भारत के मध्य बढ़ रही असमानताओं की खाई पाटने का कार्य किया। भारत की कल्याणकारी एवं उत्तरदायी सरकारों ने इन कल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से मजदूर वर्गों व दलित जातियों को आर्थिक सहायता प्रदान कर उन्हें साहूकारों व सूदखोरों के आर्थिक शोषण से मुक्त कराया। भारतीय सरकार ने ग्रामीण खेतिहर एवं दलित वर्गों के लिए कल्याणकारी योजनाओं को लागू कर उन्हें राष्ट्र के उत्थान एवं विकास में सहयोगी बनाया।

अतः हम कह सकते हैं कि भारत की संसदीय शासन–प्रणाली के लोक कल्याणकारी कार्यों के कारण आज भारत में दलितों, आदिवासी,एवं पिछड़े वर्गों में भी लघु, मध्यम वर्ग उभरा है। इस मध्यम वर्ग में अपने अतीत को लेकर छटपटाहट है। प्रख्यात राजनीतिशास्त्री क्रिस्टोफे जेफरलॉट ने भी भारत के समग्र विकास एवं वंचित वर्गों के उत्थान के लिए भारत की संसदीय–व्यवस्था को ही उत्तरदायी माना है। इतना ही नहीं श्री जेफरलॉट ने भारतीय शासन संरचना में वंचित वर्गों की उपलब्धियों पर 500 पृष्ठों का सारगर्भित लेख लिखा। श्री जेफरलॉट के अनुसार वंचित वर्गों में सामुदायिक चेतना एवं जातीय गर्व स्थापित हो रहा है। अंततः हम कह सकते हैं कि संसदीय प्रणाली में जनता के प्रति उत्तरदायित्व की भावना के कारण हमारे शासक अभिजन चुनावों में सफलता प्राप्त करने के लिए जन–उपयोगी एवं कल्याणकारी कार्यों का क्रियान्वयन करते हैं, ताकि ज्यादा–से–ज्यादा जनमत का समर्थन मिल सके और चुनावी राजनीति में विजय हासिल हो। शासक अभिजनों के इस रवैये के कारण भारत में दलित पिछड़े एवं हाशिए पर स्थित जातियाँ लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रक्रिया से अपने को जोड़कर देश की मुख्यधारा में अपनी सशक्त एवं प्रभावी भूमिका का निर्वहन करती हैं। भारतीय लोकतंत्र की स्थायित्व, निरन्तरता एवं दक्ष शासक अभिजन भारत को विकसित देशों की श्रेणी में लाने को आतुर एवं वचनबद्ध हैं यह भारतीय लोकतंत्र एवं संसदीय–प्रणाली की सार्थकता एवं उपादेयता है।

ooo

# स्वतन्त्रता और समानता

❑ बहादुर सिंह रावत 'चंचल'

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, समाज में रहना उसका स्वभाव भी है और उसकी बाध्यता भी। क्योंकि मनुष्य एकान्त में नहीं रहना चाहता, यह उसकी बाध्यता है, क्योंकि समाज में रहकर ही मनुष्य को उस वातातवरण की प्राप्ति हो सकती है जिसका उपभोग कर अपना सर्वश्रेष्ठ नैतिक विकास कर सकता है। इसी निमित्त उसे समाज में अनेक प्रकार के अधिकार प्रदान किए गए हैं। व्यक्ति अपने अधिकारों का भली–भाँति प्रयोग कर सके, इसकी दो पूर्व शर्तें हैं– पहली बात यह है कि इन अधिकारों के प्रयोग में किसी प्रकार की बाधा नहीं पैदा की जानी चाहिए क्योंकि ऐसा होने से ये अधिकार मात्र सैद्धान्तिक रह जाते हैं। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि चूँकि समाज के सदस्य के रुप में प्रत्येक व्यक्ति समान हैं, अतएव प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के विकास का समान अवसर मिलना चाहिए। इन दो स्थितियों को ही क्रमशः 'स्वतंत्रता और 'समानता' कहा जाता है।

के0 जोसेफ और जे0 सम्पसन का मत है– ''वह समाज जिसमें मानव के अस्तित्व के लिए आधारभूत विकल्प दमन द्वारा निर्धारित होते हैं, स्वतंत्र समाज नहीं हो सकता। इसका अर्थ यह है कि समतावादी समानता और स्वतंत्रता में से किसी एक को चुन लें।

**स्वतन्त्रता–**

राजनीतिक जीवन हमेशा दो प्रवृत्तियों के पारस्परिक द्वन्द्व पर आधारित होता है। सत्ता की यह इच्छा कि शासित को अधिकाधिक नियन्त्रण में रखा जाए और शासित की यह इच्छा कि उसे अधिक से अधिक स्वतंत्रता प्राप्त हो। इतिहास इस बात का साक्षी है कि एक इकाई के रुप में या समूह के एक सदस्य के रुप में मनुष्य ने हमेशा निरंकुश सत्ता का विरोध किया है। फ्रांस की क्रांति 'राजा' और 'अभिजात्य' वर्ग की निरंकुशता के विरुद्ध थी। इसका उद्देश्य फ्रांस में एक ऐसी सरकार की स्थापना करना था जो स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के मूल्यों की स्थापना कर सकें। अमरीकी क्रांति ब्रिटिश उपनिवेशवाद को समाप्त करने की दिशा में उन्मुख थी। इसका उद्देश्य एक जनप्रतिनिधि वाली सरकार की स्थापना करना था। अमरीकी गृहयुद्ध का उद्देश्य गुलामों की स्वतंत्रता सुनिश्चित करना था। दोनों विश्व युद्धों द्वारा आत्मनिर्णय के सिद्धान्त को मान्यता दी गई।

जिसका आशय था कि लोगों को अपनी सरकार स्वयं चुनने की स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। कुल मिलाकर यदि देखा जाए तो ऐसा लगता है कि राष्ट्रों का इतिहास स्वतंत्रता के लिए मनुष्य के संघर्ष का ही इतिहास है।

इतिहास इस बात का भी गवाह है कि स्वतंत्रता ही मनुष्य और सभ्यता का सार तत्व है। इसके अभाव में मनुष्य उस आनन्द की प्राप्ति नहीं कर सकता जो किसी भी मनुष्य का अन्तिम लक्ष्य होता है। अधिकार इसी आनन्द की प्राप्ति का साधन है जबकि स्वतंत्रता साध्य है। इस प्रकार स्वतंत्रता केन्द्रीय विषय है और किसी भी राजनीति का अन्तिम उद्देश्य ऐसे वातावरण की सृष्टि करना होना चाहिए जिसमें रहकर व्यक्ति अपने अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति कर सके।

**स्वतंत्रता की आवश्यकता**– मनुष्य के लिए स्वतंत्रता की आवश्यकता का विवेचन इस प्रकार किया जा सकता है–

**(1) स्वतंत्रता मनुष्य के स्वभाव में अन्तर्निहत है**– स्वतंत्रता मनुष्य का स्वभाव है क्योंकि वह स्वतंत्र पैदा हुआ है। प्रत्येक मनुष्य में एक स्वतंत्र इच्छा होती है। इसके अनुकूल आचरण करने में ही वह अपनी सर्वश्रेष्ठ क्षमता का प्रदर्शन करता है। मनुष्य के कार्यों को नियमित और नियंत्रित किया जा सकता है, परन्तु उसकी स्वतंत्र इच्छा को बाहर से नियंत्रित कर पाना असम्भव है। क्योंकि वह अमूर्त और अदृश्य है और इसका निवास व्यक्ति के अन्तस में है। प्रत्येक मनुष्य कम से कम उन कार्यों को करने की स्वतंत्रता चाहता है जिनसे उसके व्यक्तित्व का विकास हो सके।

**(2) व्यक्तित्व के विकास के लिए अपरिहार्यता**– मनुष्य मूलतः एक नैतिक प्राणी है जिसका उद्देश्य अपने उन सद्‌गुणों का विकास है जो प्रकृति प्रदत्त है। मनुष्य का विकास एक लम्बी प्रक्रिया है जिसमें स्वयं मनुष्य की सहभागिता की सर्वाधिक आवश्यकता है। मनुष्य का नैतिक विकास तभी हो सकता है जब वह अपनी स्वतंत्र इच्छानुकूल आचरण कर सके। डी.एच.ग्रीन स्वतंत्रता को परिभाषित करते हुए लिखते हैं ''स्वतंत्रता उन कार्यों को करने की सुविधा है जो करने योग्य हैं और उन सुखों को भोगने की सुविधा है, जो भोगने योग्य हैं।''

**(3) स्वतंत्रता से ही प्रगति सम्भव है**– मानव समाज की आकांक्षा अधिकतम प्रगति है परन्तु इसके लिए आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमताओं का यथासम्भव विकास करते हुए समाज के कल्याणार्थ उसका प्रयोग करे। क्षमता के विकास के लिये व्यक्ति को स्वतंत्र परिवेश प्रदान करना आवश्यक है, विचारों और कार्यो की स्वतंत्रता का प्रयोग करके ही व्यक्ति समाज की प्रगति में

योगदान दे सकता है।

**(4) स्वतंत्रता मनुष्य को उत्तरदायी बनाती है**– स्वतंत्रता में कुछ करने की भावना का भाव निहित है। उत्तरदायित्व का भाव तभी विकसित हो सकता है जब मनुष्य को कुछ करने का अवसर मिले। इसलिए मनुष्य में उत्तरदायित्व का भाव विकसित करने हेतु स्वतंत्रता आवश्यक है।

**स्वतंत्रता का अर्थ**– स्वतंत्रता अंग्रेजी भाषा के 'Liberty' नामक शब्द का हिन्दी रूपान्तर है। शाब्दिक उत्पत्ति की दृष्टि से 'Liberty' लैटिन भाषा के 'Liber' नामक शब्द से उद्‌भूत है। इसका अर्थ होता है–'मुक्त' (Free) होना अर्थात बन्धनों से परे होना। परन्तु इस अर्थ में स्वच्छंदता का पर्यायवाची बन जाती है। समाज में सभी व्यक्तियों की स्वतंत्रता का समान महत्व है। अतएव प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि वह अपनी स्वतंत्रता की अभिलाषा के साथ ही दूसरों की स्वतंत्रता का भी सम्मान करे। ''बार्कर' ने लिखा है 'जिस प्रकार वदसूरती का न होना खूबसूरती नहीं है, उसी प्रकार बंधनों का अभाव स्वतंत्रता नहीं है।

**प्रश्न है**– स्वतंत्रता का वास्तविक अर्थ क्या है? यूनानी विचारक मानते थे कि स्वतंत्रता का आशय है राज्य की विधियों का पालन। ''रूसो'' का कहना है –''समाज में व्यक्ति तब स्वतंत्र होता है जब वह अपने को समाज के अधीन कर लेता है। ''ग्रीन''जैसे आर्दशवादी के लिए ''स्वतंत्रता'' उन कार्यों को करने के लिए अथवा उन सुखों को भोगने की क्षमता है जो करने अथवा भोगने योग्य हैं। ''मार्क्स'' का मत है– ''सही अर्थों में स्वतंत्रता केवल उसी समाज में सम्भव है जो वर्गों से मुक्त हो और जिसमें उत्पादन के साधन व्यक्तिगत हाथों में न होकर समाज के हाथों में हों।''

अन्य विद्वानों ने स्वतंत्रता के लिए अपने अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है– ''स्वतंत्रता अति शासन का विलोम होती है'' ऐसा 'सीले' का मानना है। 'मैकेन्जी' ने लिखा है–''स्वतंत्रता सब प्रकार के प्रतिबन्धों की अनुपस्थिति नहीं वरन् अनुचित के स्थान पर उचित प्रतिबन्धों की व्यवस्था ही स्वतंत्रता है।'' 'लास्की' के शब्दों में– ''स्वतंत्रता आत्म उपलब्धि का सकारात्मक और समान अवसर है।'' जी.डी. एच. कौल ने लिखा है–''बिना किसी बाधा के अपने व्यक्तित्व को पूर्णतया अभिव्यक्त करने की सुविधा ही स्वतंत्रता है।''

**स्वतंत्रता के प्रकार**– स्वतंत्रता का सम्बन्ध मनुष्य के पूरे व्यक्तित्व से है जिसके अनेक रूप या प्रकार इस तरह हैं–

**(1) प्राकृतिक स्वतंत्रता**– इसका आशय मनुष्य के जन्मजात स्वतंत्रता से है। इस प्रकार इसका अर्थ हुआ–'व्यक्ति अपनी स्वतंत्रता के लिए राज्य पर निर्भर नहीं है इसलिए राज्य को व्यक्ति की स्वतंत्रता को परिसीमित करने का अधिकार नहीं है। 'रूसो' का कहना है–'मनुष्य स्वतंत्र पैदा हुआ है तो उसका यही अभिप्राय है कि स्वतंत्रता मनुष्य का स्वाभाविक गुण है। संयुक्त राज्य अमरीका की 'स्वाधीनता' की घोषणा' और फ्रांस की राज्य क्रांति की पृष्ठि भूमि में स्वतंत्रता की संभवतः यही धारणा विद्यमान थी। इसके बावजूद प्राकृतिक स्वतंत्रता की धारणा का महत्व इस बात में निहित है कि मनुष्य होने के नाते मनुष्य को कतिपय मूलभूत स्वतंत्रता मिलनी ही चाहिए। इन मूलभूत और मौलिक स्वतंत्रताओं के बिना व्यक्तित्व का विकास सम्भव नहीं है। राज्य का यह दायित्व है कि वह व्यक्ति को ये मूलभूत स्वतंत्राएँ उपलब्ध कराए ताकि वह अपने व्यक्तित्व का सम्यक् विकास कर सके।

**(2) नागरिक स्वतंत्रता**– नागरिक स्वतंत्रता राज्य के सदस्यों के आत्म–विकास के लिए अति आवश्यक है। साथ ही उनका उपभोग करते हुए नागरिक राज्य तथा समाज के प्रति अपने दायित्वों को सम्पन्न कर लेने की क्षमता प्राप्त कर लेता है। 'अनेस्ट वार्कर' का मानना है–राज्य के सदस्य के रूप में व्यक्ति की तीन मुख्य स्वतंत्रताएँ होती है–(क) जीवन स्वास्थ्य और आवागमन के सन्दर्भ में किसी प्रकार का प्रतिबन्ध न होना, (ख) विचार और विश्वास की बौद्धिक स्वतंत्रता तथा (ग) संविदा तथा अन्य व्यक्तियों से सम्बन्ध स्थापित करने की स्वतंत्रता।

नागरिक स्वतंत्रता के अन्तर्गत विचार और अभिव्यक्ति,समुदाय–निर्माण, आवागमन, तथा निवास, विश्वास तथा उपासना आदि स्वतंत्रताएँ आती हैं राज्य के हित, सार्वजनिक स्वास्थ्य राष्ट्रों से सम्बन्ध आदि के आधार पर राज्य द्वारा इन्हें सीमित किया जा सकता है। उदाहरणार्थ–अभिव्यक्ति या धर्म की स्वतंत्रता का प्रयोग अन्य व्यक्तियों या किसी वर्ग विशेष को क्षति पहुँचाने की दृष्टि से नहीं किया जा सकता। नागरिक स्वतंत्रता कानून की कृति होती है, अतः इसकी पूर्व–शर्त है कि कानून के समक्ष सभी नागरिकों को समान समझा जाए।

**(3) वैयक्तिक स्वतंत्रता**– प्रसिद्ध व्यक्तिवादी विचारक जे0 एस0 मिल का मानना है ''समाज को केवल आत्म रक्षा के उद्देश्य से ही किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता में व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से हस्तक्षेप का अधिकार प्राप्त है। अपने पर अपने शरीर, मस्तिष्क और आत्मा पर व्यक्ति सम्प्रभु सा है।'' 'लस्की' लिखते

हैं– ''व्यक्तिगत स्वतंत्रता का सार मुख्यतः व्यक्ति के स्वयं से है। यह जीवन के निजी सम्बन्धों में उसके अपने विकास का एक अवसर है।'' वैयक्तिक स्वतंत्रता के अन्र्तगत जीवन, शारीरिक सुरक्षा, विवेध, धर्म, सम्पति आदि की स्वतंत्रता को रखा जा सकता है।

अमेरिका के संविधान में कहा गया है किसी व्यक्ति को उसके जीवन, स्वतंत्रता तथा सम्पत्ति से कानून की उचित प्रक्रिया द्वारा ही वंचित किया जा सकता है।'' इसी प्रकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत–किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया से ही वंचित किया जा सकता है।''

**(4) सामाजिक स्वतंत्रता**– सामाजिक स्वतंत्रता से अभिप्राय यह है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को विकसित होने का समान अवसर उपलब्ध हो। उसके मार्ग में कोई सामाजिक बाधा न हो। विद्वानों के विचारों में सामाजिक स्वतंत्रता समस्त स्वतंत्रताओं का मूल है।

**(5) धार्मिक स्वतंत्रता**– धर्म, आस्था और वैयक्तिक निष्ठा का प्रश्न है इसलिए व्यक्ति को धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त हो। धार्मिक स्वतंत्रता का अभिप्राय है–व्यक्ति को कोई भी मत धारण करने अथवा किसी भी धर्म का अनुसरण करने की स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। सभी धर्मों के आधारभूत मूल्य एक ही हैं। वे सभी प्रेम और शांति का सन्देश देते हैं। धार्मिक स्वतंत्रता व्यक्ति के धार्मिक पक्ष को सुदृढ़ करती है।

**(6) राजनीतिक स्वतंत्रता**– राजनीतिक जीवन में सहभागिता ही राजनीतिक स्वतंत्रता का आधार है। 'लास्की' का विचार है–''राज्य के कार्यों में सक्रिय भाग लेने की स्वतंत्रता राजनीतिक स्वतंत्रता है। इस प्रकार की स्वतंत्रता लोकतंत्र में ही सम्भव है।''

'लीकॉक' ने राजनीतिक स्वतंत्रता को संवैधानिक स्वतंत्रता का पयार्यवाची माना है। उनका कहना है–'' ..... मैं राज्य के मामलों में खुल के भाग ले सकता हूँ। मेरे उच्च पद पर पहुँचने के मार्ग में कोई ऐसी रुकावट नहीं है जोकि सभी के लिए न हो। ''राजनीतिक स्वतंत्रता के अन्तर्गत चार प्रकार के अधिकारों को सम्मिलित किया जा सकता है (1) मतदान करने और अपने प्रतिनिधियों को चुनने का अधिकार (2) सार्वजनिक पदों पर निर्वाचित होने का अधिकार (3) सार्वजनिक विषयों पर सूचना पाने का अधिकार तथा (4) सरकार की अलोचना करने का अधिकार।

**(7) आर्थिक स्वतंत्रता–** आर्थिक स्वतंत्रता राजनीतिक स्वतंत्रता के अस्तित्व की पूर्व शर्त है। क्योंकि मनुष्य भूख, कुपोषण, अभाव, बेरोजगारी आदि से ग्रस्त है तो उसके लिए राजनीतिक स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं। 'लास्की' का मानना है–''आर्थिक स्वतंत्रता का अर्थ है कि प्रत्येक प्राणी को अपनी जीविका कमाने के लिए समुचित सुविधा तथा सुरक्षा प्राप्त हो। विद्वानों का विचार है–''व्यक्तियों की आर्थिक स्वतंत्रता तभी संभव है जब समाज में आर्थिक लोकतंत्र हो। व्यापक अर्थों में आर्थिक लोकतंत्र की अवधारणा औद्योगिक लोकतंत्र की स्थापना का आग्रह करती है जिसमें प्रबन्ध में श्रमिकों की भागीदारी की बात निहित है।

**(8) नैतिक स्वतंत्रता–** इस स्वतंत्रता के मूल में एक नैतिक मनुष्य की अवधारणा है जिसमें स्वतंत्र इच्छा और 'स्वतंत्र' चेतना होती है। व्यक्ति का यह आग्रह होता है कि उसे निर्णय लेने की स्वतंत्रता प्राप्त हो। राज्य का यह दायित्व है कि व्यक्ति के निर्णय लेने के मार्ग में जो बाधाएं हों, उसे दूर करें।

**स्वतंत्रता का महत्व–**

स्वतंत्रता का मनुष्य के लिए वही महत्व है जो पौधों के लिए खाद और पानी का। जिस प्रकार खाद और पानी के अभाव में पौधे का विकास नहीं हो सकता, उसी प्रकार स्वतंत्रता के अभाव में मनुष्य का विकास नही हो सकता। ''बर्ट्रेण्ड रसेल' ने लिखा है– ''स्वतंत्रता की इच्छा एक स्वाभाविक प्रवृति है और इसी के आधार पर सामाजिक जीवन का निर्माण सम्भव है। ''मैजिनी का विचार है– ''स्वतंत्रता के अभाव में आप अपना कोई कर्तव्य पूरा नहीं कर सकते अतएव आपको स्वतंत्रता का अधिकार दिया जाता है और जो भी शक्ति इस अधिकार से आपको वंचित रखना चाहती है उससे जैसे भी बने अपनी स्वतंत्रता छीन लेना आपका कर्तव्य है।''

स्वतंत्रता का अधिकार मनुष्य का जन्म जात अधिकार है। प्राकृतिक अधिकार सिद्धान्त यह मानता है कि जीवन स्वतंत्रता और सम्पत्ति के अधिकार मनुष्य अपने साथ लेकर पैदा हुआ है। अतः ये अधिकार उसे राज्य द्वारा प्रदत्त नहीं है इसलिए राज्य इनसे मनुष्य को वंचित नहीं कर सकता। लॉक का मानना है– 'सरकार का मूल्यांकन इस आधार पर होना चाहिए कि यह किस सीमा तक प्राकृतिक अधिकारों जीवन स्वतंत्रता और सम्पत्ति की रक्षा करने में समर्थ रही है।''

व्यक्ति का अन्तिम लक्ष्य अपने व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास है। यह तभी सम्भव है जब उसे इसके लिए अनुकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध करायी जाएं।

इन्हीं परिस्थितियों को अधिकार कहते हैं और अधिकारों के समान योग को ही स्वतंत्रता कहते हैं।

मनुष्य एक चैतन्यशाली प्राणी है। सृष्टि की जीवित इकाई होनेके नाते मनुष्य स्वभाव से स्वतंत्रता को पसन्द करता है। इतिहास की तमाम बड़ी क्रान्तियों का एक आदर्श स्वतंत्रता भी रहा है।

**समानता–**

समानता आधुनिक युग की कदाचित सबसे चर्चित अवधारणा है। चर्चा का कारण यह है कि इसके सिद्धान्त और व्यवहार में विरोधाभास है। 'लास्की' का मानना है–'' पूरे राजनीतिक सिद्धान्त में इससे अधिक दुष्कर अवधारणा और कोई नहीं है। ''साधारण बोल–चाल की भाषा में समानता का आशय–सभी मनुष्यों को समान अधिकार, समान सुविधायें तथा समाज में समान स्थान मिले परन्तु समानता का यह अर्थ भ्रामक है क्योंकि यह समानता का यथार्थ नहीं वरन् उसका आदर्श प्रस्तुत करता है। 'लास्की' ने लिखा है– ''समानता का यह अर्थ नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाए अथवा प्रत्येक व्यक्ति को समान वेतन मिले, यदि ईंट ढोने वाले का वेतन एक गणितज्ञ या वैज्ञानिक के वेतन के बराबर कर दिया जाए तो इससे समाज का उद्देश्य ही नष्ट हो जायेगा।

स्वतंत्रता की भांति समानता भी निरपेक्ष नहीं होती। प्राकृतिक असमानता के कारण समाज में व्यक्ति–व्यक्ति के मध्य असमानता को देखते हुए यदि समाज सभी व्यक्तियों को आत्म विकास के समान अवसर प्रदान करे तो यह सम्भव नहीं है कि सभी व्यक्ति इन सुविधाओं का समान रुप से लाभ उठा सकें। उदाहरणार्थ– कक्षा का अध्यापक सभी छात्रों को वही शिक्षा देता है परन्तु परीक्षा में सभी वि़द्यार्थियों के भिन्न–भिन्न अंक होते हैं। यथार्थ में, अपनी शारीरिक और मानसिक क्षमता के अनुकूल भिन्न–भिन्न व्यक्तियों को विकास के लिए भिन्न–भिन्न सुविधाओं की आवश्यकता होती है।

आखिर समानता है क्या?''आक्सफोर्ड'' अंग्रेजी शब्द कोष में समानता के तीन आशय बतलाए गए हैं–

(1) समान गरिमा, स्थिति और सुविधाएँ प्राप्त करने की स्थिति,

(2) शक्ति श्रेष्ठता और योग्यता की उपलब्धि की स्थिति ,

(3) निष्पक्षता।

सर अर्नेस्ट बार्कर का विचार है– ''अधिकारों के रूप में मुझे जो स्थितियाँ उपलब्ध करायी जाती है, वे और लोगों को भी वैसे ही उपलब्ध करायी जाएं और यह कि जो अधिकार और लोगों को उपलब्ध कराए गए हैं वे मुझे भी मिलने चाहिए। 'लास्की' का कहना है–''समानता का सर्वप्रथम आशय यह है कि विशेषाधिकारों की समाप्ति हो''। उनका आगे कहना है– ''मेरी इच्छा को दूसरे की इच्छा के समान समझा जाए! ''इस प्रकार कहा जा सकता है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के विकास का अवसर मिलना चाहिए। समानता के लिए पहली आवश्यकता यह है कि समाज में कोई विशेष 'हित' या 'वर्ग' न हो। समानता का आधार यह विचार है कि समाज के लिए प्रत्येक व्यक्ति का समान महत्व है।

विभिन्न विचारकों ने समानता को परिभाषित करते हुए अपने –अपने विचारों को इस तरह व्यक्त किया है। 'लास्की' ने लिखा है– ''निःसन्देह, यह समतलीकरण की एक प्रक्रिया है। इसका अर्थ है कि समाज में किसी व्यक्ति का स्थान ऐसा न हो जाए कि वह अपने पड़ोसी से इस कदर हो जाए कि पड़ोसी को अपनी नागरिकता की अवहेलना लगने लगे।

डी0डी0 रैफेल का मत है–''समानता के अधिकार का आशय है, मूलभूत मानव आवश्यकताओं की समान सन्तुष्टि। इसमें मनुष्य की क्षमताओं के विकास की आवश्यकता और उपयोग सम्मिलित है।

जे0ए0 कारी का मानना है–––समानता का आदर्श इस बात पर बल देता है कि मनुष्य राजनीतिक दृष्टि से समान हैं तथा सभी नागरिक राजनीतिक जीवन में भाग लेने के लिए अधिकृत हैं............इसमें इस बात पर बल दिया गया है कि सभी नागरिक कानून के समक्ष समान हैं। और राज्य द्वारा जो भी अधिकार प्रदान किए जाएंगे अथवा जो भी कर्तव्य आरोपित किए जाएंगे, वे सबके सन्दर्भ में समान होंगे।''

अतः समानता का आशय सिर्फ इतना है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमता तथा आवश्यकताओं के अनुरुप अपने व्यक्तित्व के विकास का अधिकतम अवसर मिलना चाहिए। इसके अतिरिक्त समानता पर आधारित समाज में प्रत्येक व्यक्ति की न्यूनतम आवश्यकता पूरी होनी चाहिए।

**समानता के विभिन्न रुप या प्रकार**– समानता को कई रुपों या प्रकारों में इस तरह समझा जा सकता है–

**(1) प्राकृतिक समानता**– प्राकृतिक दृष्टि से सभी मनुष्य समान हैं अथवा यों

कहा जाए– प्रकृति या ईश्वर ने सभी मनुष्यों को समान बनाया है। यह समानता मनुष्य की संरचनात्मक समानता के विचार पर आधारित है। जी. डी. एच. कोल का मत है–''मनुष्य शारीरिक, बल, पराक्रम, मानसिक योग्यता, सृजनात्मक शक्ति, समाज सेवा की भावना और सम्भवतः सबसे अधिक कल्पना शक्ति में एक दूसरे से भिन्न है।''

**(2) वैधानिक समानता**– प्रत्येक व्यक्ति का जीवन, स्वतंत्रता और सम्पत्ति कानून के संरक्षण में सुरक्षित है। विधि के समक्ष समानता का यह आशय नहीं है कि राज्य 'तर्कसंगत भेदभाव' नहीं कर सकता। अतः इस प्रकार का भेदभाव समानरुप से लागू किया जाना चाहिए।

**(3) समाजिक समानता**– इस समानता का आशय समाज के सदस्य के रुप में प्रत्येक व्यक्ति बराबर है अर्थात जन्म, वंश जाति, धर्म, आदि के आधार पर किसी के साथ विभेद नहीं किया जा सकता। सं0 रा0 के मानवाधिकार घोषणा पत्र (1948) में सामाजिक समानता पर विशेष बल दिया गया है।

**(4) आर्थिक समानता**– ''लास्की'' का मत है –आर्थिक समानता सभी प्रकार की समानता का मूल है। आर्थिक समानता केवल तभी सम्भव है जब समाज में किसी का शोषण न हो। इसके लिए उत्पादन के साधन कुछ व्यक्तियों की निजी सम्पत्ति न होकर समाज की सम्पत्ति हो।

**(5) राजनीतिक समानता**– राजनीतिक समानता का अभिप्राय है–बिना किसी भेदभाव के समाज के सभी सदस्यों को शासन–कार्य में भाग लेने का अवसर प्राप्त हो अर्थात प्रत्येक व्यक्ति को मताधिकार, चुनाव लड़ने, सार्वजनिक पदों पर नियुक्त होने के सन्दर्भ में समान अवसर प्राप्त होने चाहिए।

**समानता का महत्व**–

समानता की धारणा अपेक्षाकृत नवीन अवधारणा है। इसके महत्व का आकलन इस परिप्रेक्ष्य, में किया जाना चाहिए कि लोकतांत्रिक शासन प्रणाली का यह एक आधार तत्व है। जब तक राजतंत्रो का बोलबाला रहा तब तक राजनीतिक चिन्तन में स्वतंत्रता की माँग की जाती रही परन्तु जैसे–जैसे लोकतांत्रिक, राजनीतिक प्रणालियां स्थापित होती गईं वैसे–वैसे समानता की माँग प्रखर होती गई। इसके महत्व को निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत समझा जा सकता है–

**(1) मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा**– हर मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा होती है

कि उसके साथ वैसा ही व्यवहार किया जाए जैसा कि अन्य लोगों के साथ किया जा रहा है। विभेदपूर्ण व्यवहार मनुष्य को स्वाभाविक रुप से दुःख पहुँचाता है।

**(2) व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक**– समानता और समान व्यवहार मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक है। जब तक व्यक्ति को विकास के निमित्त आवश्यक दशाएँ उसी मात्रा में न प्राप्त हो जितना अन्य लोगों को प्राप्त हैं, हम व्यक्ति के अधिकतम नैतिक विकास की आशा नहीं कर सकते।

**(3) लोक–कल्याणकारी राज्य के आदर्शों के अनुकूल**– समानता कई शताब्दी से राज्य के मुख्य आदर्शो में से एक रही है। विशेष रूप से लोक–कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के उदय के साथ ही समानता राजनीतिक जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गयी है। विधि के समक्ष समानता से सार्वजनिक जीवन में समानता का मार्ग प्रशस्त होता है।

**(4) आदर्शवादी समाज का आधार**– समानता भावी आदर्श समाज का आधार है, आदर्श समाज का एक प्रमुख तत्व सार्वभौमिक समानता की स्थापना है। इसका आशय संख्यात्मक समानता (1=1) से नहीं है, वरन् इसका आशय है प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव के विकास की परिस्थितियाँ तथा अवसर उपलब्ध कराना।

अतः समानता के बिना समाज का अधिकांश भाग स्वतंत्रता के उपभोग से वंचित रह जाएगा। लोकतांत्रिक व्यवस्था में भी सम्पत्तिशाली वर्ग विशेष सुविधाओं का उपभोग करता है जो सामान्य जन को उपलब्ध नहीं है वे राज्य की आन्तरिक और वाह्य नीतियों को अपने हितों के अनुकूल संचालित करते हैं। राज्य के कानून उन्हीं के पक्ष में बनाए जाते हैं। अभावों से ग्रस्त आम आदमी के लिए न तो राजनीतिक स्वतंत्रता का कोई अर्थ है और न ही वैधानिक स्वतंत्रता का। अतएव यह स्पष्ट है कि स्वतंत्रता के लिए राजनैतिक, नागरिक, आर्थिक तथा सामाजिक समानता आवश्यक है।

**मो0नं0– 9432380202**

○○○

# भारतीय परिप्रेक्ष्य में धर्मनिरपेक्षता

❑ कृष्ण कुमार यादव

धर्म मानव सभ्यता के प्रारम्भ से ही किसी न किसी रूप में मानव–जीवन को प्रभावित करता रहा है। धर्म मानव का अपने से परे एक ऐसी शक्ति में विश्वास है जिससे वह अपनी संवेगात्मक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि करता है तथा जीवन में स्थिरता प्राप्त करता है और जिसे वह उपासना व सेवा के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। एक व्यापक अभिवृत्ति के रूप में यह मानव जीवन के व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, व राजनैतिक सभी प्रवृत्तियों को किसी न किसी रूप में प्रभावित करता है। कालान्तर में धर्म के विस्तार के साथ ही धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा ने भी जन्म लिया। इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका के अनुसार–''धर्मनिरपेक्षता माने धर्म से स्वतन्त्र (निरपेक्ष) या गैर आध्यात्मिक (अनाध्यात्मिक) या लौकिकता या सांसारिकता सम्बन्धी विचार।'' धर्मनिरपेक्षता (सेक्युलरिज्म) जीवन का एक आधुनिक दृष्टिकोण है। यह दृष्टिकोण मूलतः पाश्चात्य जगत की पैदाइश है। राज्य के धर्म (चर्च) से अलगाव सिद्धान्त के पश्चात आधुनिक राज्य निर्माण की परिस्थितियों में मानव इतिहास और राजनैतिक संस्थाओं के नियंता रूप में ईश्वर नहीं, बल्कि स्वयं जन या जनसमुदाय को मान्यता दी गई। इस प्रकार धर्मनिरपेक्षता आधुनिक बौद्धिकता का कारगर सैद्धान्तिक हथियार बन गई और परिणामस्वरूप प्रत्येक व्यक्ति के निजी जीवन में धर्म व अन्धविश्वास की बजाय विज्ञान और बुद्धि को महत्व मिलना शुरू हो गया।

''सेक्युलरिज्म'' शब्द के प्रणेता जॉर्ज जेकब होलियाक (1851 में) ने धर्मनिरपेक्षता को पारिभाषित करते हुए कहा था कि– श्धर्मनिरपेक्षता भौतिक साधनों द्वारा मानव–कल्याण में अभिवृद्धि और दूसरों की सेवा को जीवन का आदर्श बनाने वाला साधन है।श उसने धर्म के रूढ़िगत आयामों पर कुठाराघात किया पर उसका ये भी मानना था कि धर्मनिरपेक्षता माने नास्तिक या धर्म विरोधी नहीं। उसने सभ्य समाज के धार्मिक आधार पर समाजवादी मानवतावादियों की तरह प्रश्नचिन्ह लगाते हुए कहा– श्ऐसे रूढ़िवादी धर्म से एक गरीब व्यक्ति को क्या लेना–देना है, जो अपनी शुरूआत ही उसे एक दीन– हीन प्राणी बता कर करता है और अन्त उसे एक असहाय गुलाम बनाकर करता है। एक गरीब व्यक्ति स्वयं को एक हथियारबन्द दुनिया में पाता है, जहाँ शक्ति ही ईश्वर है और गरीबी बेड़ी है।श पर कालान्तर में चार्ल्स ब्राडलॉफ जिसने सन् 1860 के बाद धर्मनिरपेक्ष आन्दोलन को बहुत प्रभावित किया, जोर देकर कहा कि एक

धर्मनिरपेक्षतावादी को कट्टर निरीश्वरवादी (नास्तिक) होना चाहिए। कालान्तर में इसी दृष्टिकोण को मार्क्सवादियों, समाजवादियों और साम्यवादियों ने भी अपनाया।

धर्मनिरपेक्षता को पाश्चात्य एवं भारतीय सन्दर्भों में समझना ज्यादा सटीक होगा। पाश्चात्य दृष्टिकोण के अनुसार– "धर्मनिरपेक्षतावाद वह दर्शन है जिसमें परम्परागत धर्मों व आध्यात्मिकता की अवहेलना की जाती है एवं मानव को अपने पार्थिव हितों की ओर ध्यान देना सिखाया जाता है।" इसके अनुसार ईश्वरवाद और अनीश्वरवाद दोनों को ही उपेक्षित करना चाहिए क्योंकि वैज्ञानिक रीति से इन्हें न तो स्वीकार किया जा सकता है एवं न ही खण्डित। इस सिद्धान्त का समकालीन विचार में प्रत्यक्षवादियों, अर्थ क्रियावादियों, भाषा–विश्लेशणवादियों, तार्किक भाववादियों और कुछ अस्तित्ववादियों ने समर्थन व प्रतिपादन किया। जहाँ प्रत्यक्षवाद का मानना है कि ज्ञान की कुछ ऐसी भी विधियाँ हैं, जिनको आधार मानकर धार्मिक मान्यताओं, ईश्वरवादी कथनों एवं तत्ववैज्ञानिक सिद्धान्तों का खण्डन किया जा सकता है वहीं तार्किक भाववादियों ने सत्यापन के सिद्धान्त के माध्यम से तत्वविज्ञान का उन्मूलन किया व धर्मनिरपेक्ष चिन्तन की प्रवृत्ति का पोषण किया। ऐसे में धर्मों के प्रति उपेक्षा व तटस्थता या उदासीनता अपनाना ही पाश्चात्य धर्मनिरपेक्षता का मूल है। पाश्चात्य मत से परे भारतीय विचारकों के मत में– "धर्मनिरपेक्षता का अर्थ धर्महीनता नहीं। इसका अर्थ सभी धर्मो के प्रति समान आदर भाव एवं सभी व्यक्तियों हेतु समान अवसर है, चाहे कोई भी व्यक्ति किसी भी धर्म का अनुयायी क्यों न हो।" जहाँ पाश्चात्य धर्मनिरपेक्षता धर्म व आध्यात्मिकता की अवहेलना करती है, वहीं भारतीय समाज प्राचीन आध्यात्मिक परम्परा को स्वीकार करते हुए सभी धर्मों के प्रति सहनशील होना व उन सबका समान रूप से आदर करना ही धर्मनिरपेक्षता मानता है। वस्तुतः पाश्चात्य और भारतीय दोनों मत क्रमशः धर्मनिरपेक्षता के अभावात्मक एवं भावात्मक रूप का प्रतिपादन करते हैं पर इस अन्तर के बावजूद दोनों ही वैज्ञानिक दृष्टिकोणों को अपनाते हुए बौद्धिक एवं वैज्ञानिक उपायों द्वारा व्यापक अर्थों में मानव–कल्याण हेतु मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस प्रकार दोनों ही मत राजकीय कार्यों में किसी भी धर्म को संरक्षण नहीं देते हैं। समग्र रूप में कहा जाय तो–''धर्मनिरपेक्षता एक प्रकार का मानवतावादी जीवन दर्शन है जो राजनीति, प्रशासन व कानून इत्यादि को धर्म व सम्प्रदायों से पृथक रखते हुए एवं मानव को अलौकिक या दैवी शक्तियों पर आश्रित रहने के स्थान पर पूर्णतया आत्मनिर्भर बनने की प्रेरणा देकर उसके वैयक्तिक और सामाजिक कल्याण हेतु मार्ग प्रशस्त करता है। ऐसे में धर्मनिरपेक्षता हर व्यक्ति को बिना किसी भेद–भाव के स्वतन्त्र रूप में व्यक्तित्व विकास का अवसर देती है और इस प्रकार

धर्मनिरपेक्षता रूढ़िवाद, अन्धविश्वास, धार्मिक कट्टरता, सम्प्रदायवाद एवं संकीर्णतावाद इत्यादि का परित्याग कर व्यापक अर्थों में समाज एवं राष्ट्र निमार्ण का मार्ग प्रशस्त करती है।'' यह ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार बुद्ध ने तत्वमीमांसीय प्रश्नों पर मौन साधकर 'आत्मदीपोभव' का उपदेश दिया था।

भारतीय परम्परा में धर्म की एक विस्तृत अवधारणा रही है और धर्म को कर्तव्यपूर्ण न्याय संहिता व नैतिकता से भी जोड़ा गया है। यही कारण है कि भारतीय संविधान की प्रस्तावना में बयालीसवें संशोधन द्वारा 'पंथनिरपेक्षता' शब्द जोड़ा गया। पंथनिरपेक्ष राज्य इस विचार पर आधारित है कि राज्य का विषय मात्र व्यक्ति व व्यक्ति के बीच सम्बन्ध से है, व्यक्ति व ईश्वर के बीच सम्बन्ध से नहीं। यह सम्बन्ध व्यक्ति के अन्तःकरण का विषय है। अनेकता में एकता स्थापित करने वाले बहुधर्मी एवं बहुभाषीय राष्ट्र भारत के लोगों की एकता व उनमें बन्धुत्व स्थापित करने हेतु संविधान में पंथनिरपेक्ष राज्य का आदर्श रखा गया अर्थात राज्य सभी मतों की समान रूप से रक्षा करेगा और किसी भी मत को राज्य के पंथ के रूप में नहीं मानेगा। संविधान का अनुच्छेद 15 धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर किसी भी प्रकार के विभेद का प्रतिशोध करता है तो अनुच्छेद 25 से 28 तक में अन्तःकरण की और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। यही नहीं, अल्पसंख्यक धार्मिक समुदायों के लिए अनुच्छेद 29 में उपबन्ध किया गया है कि राज्य उन पर सम्प्रदाय की अपनी संस्कृति से भिन्न कोई संस्कृति अधिरोपित नहीं करेगा तो अनुच्छेद 30 प्रतिपादित करता है कि अल्पसंख्यक धार्मिक समुदायों को अपनी रूचि की शिक्षा–संस्थाओं की स्थापना व प्रशासन का अधिकार होगा और राज्य ऐसी शिक्षा संस्थाओं को सहायता देने में अल्पसंख्यक वर्ग की शिक्षा संस्थाओं के विरूद्ध इस आधार पर विभेद नहीं करेगा कि वह किसी धार्मिक समुदाय के प्रबन्ध में हैं। यहाँ पर स्पष्ट करना जरूरी है कि किसी भी रूप में यह निरपेक्षता या तटस्थता नकारात्मक नहीं वरन् सकारात्मक है अर्थात यदि कोई विशिष्ट कर्मकाण्ड या पूजा पद्धति लोक स्वास्थ्य या सदाचार के विरूद्ध है या धार्मिक पद्धति का सारवान अंग नहीं है और किसी समाजिक, आर्थिक या राजनैतिक विनियमन करने वाली विधि का उल्लघंन करती है, तो राज्य हस्तक्षेप कर सकेगा।

भारतीय धर्मनिरपेक्षता की परम्परा सकारात्मक रूप में ष्सर्वधर्मसमभावष का पोषण करती है। इस रूप में भारत में धर्मनिरपेक्षता आयातित अवधारणा न होकर मूल अवधारणा है। सिन्धु घाटी सभ्यता काल में जिस वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सद्भाव व सामंजस्य पर जोर दिया जाता था, वही भारत की

धर्मनिरपेक्षता आज भी विद्यमान है। भारत की धर्मनिरपेक्षता की परम्परा प्राचीन, मध्यकालीन व आधुनिक काल की संस्कृतियों की विभिन्न विचारधाराओं और विशिष्टताओं मसलन–सहिष्णुता, शांति, अहिंसा, सामंजस्य व समन्वय, निरन्तरता एवं विकास का सम्मिलित रूप है, जिसमें रूढ़ कर्मकाण्डों की बजाय सहज करूणा–मैत्री पर आधारित धर्म पर जोर दिया जाता है। महात्मा बुद्ध और महावीर जैन ने तत्कालीन धर्म की बुराइयों को दूर करने पर जोर दिया एवं अष्टांगिक मार्ग, चार आर्य, सत्य व पंचमहाव्रत के माध्यम से ऐसे आचरण के सिद्धान्तों को सामने रखा जो हर धर्म हेतु मान्य हैं। मौर्य सम्राट अशोक ने बौद्ध होते हुए भी 'धम्म' आधारित शासन व्यवस्था की नींव रखी, जो कि नैतिकता एवं सभी के लिए समानता के सिद्धान्त पर आधारित थी। मध्यकाल में मुगल सम्राट अकबर ने 'सुलह–ए–कुल' स्थापित किया जो सभी के लिए शान्ति और सम्मान के सिद्धान्त पर आधारित था। कालान्तर में अकबर ने 'दीन–ए–इलाही' का प्रचार किया, जिसके अनुसार साम्राज्य के सारे लोग समान हैं एवं हिन्दू–मुस्लिम अनुयायियों को स्वतन्त्रतापूर्वक अपने–अपने धर्म का आचरण करने की स्वतन्त्रता है। मध्यकाल में ही सूफी सन्तों ने भी दोनों धर्मो से अच्छी बातों को लेकर प्रचार किया। सिख धर्म के पाँचवें गुरू अर्जुन देव ने 'आदिग्रन्थ' की रचना की जिसमें सिक्खों के गुरू तथा हिन्दू व मुसलमान सन्तों की वाणियों को संकलित किया गया है, यह ग्रन्थ धर्मनिरपेक्षता का प्रतीक है। 'वसुधैव कुटुम्बकम' वैदिक काल से ही भारतीय संस्कृति की पहचान रही है, यही कारण है कि भारत ने बाहर से आए विभिन्न धर्मों को आत्मसात किया और वे यहीं के होकर रह गए। आधुनिक काल में संविधान की प्रस्तावना व इसके अनुच्छेदों के माध्यम से एक राष्ट्र के रूप में भारत ने सांस्कृतिक ही नहीं वरन् संवैधानिक दृष्टि से भी पंथनिरपेक्षता व सर्वधर्मसमभाव की परम्परा को कायम रखा। स्वयं राष्ट्रपिता गाँधी जी का 'सर्वधर्मसमभाव' इन अनूठी परम्पराओं का निचोड़ था।

भारत एक बहुधर्मी राष्ट्र है। जन्म से लेकर मृत्यु तक हर संस्कार किसी न किसी रूप में धर्म से जुड़ा हुआ है। यदि धर्मनिरपेक्षता माने धर्म का बहिष्कार है तो भारतीय परिप्रेक्ष्य में पाश्चात्य धर्मनिरपेक्षता मान्य नहीं हो सकती क्योंकि तब राज्य को एक ऐसी सार्वभौमिक जीवन पद्धति को इजाद करना होगा, जो धार्मिक संस्कारों की जगह ले सके। वस्तुतः राज्य कोई जड़ उपकरण नहीं है वरन् यह व्यक्तियों से संचालित होता है। अगर व्यक्ति धर्म से संचालित है तो राज्य को भी किसी न किसी रूप में धर्म से संचालित होना होगा। धर्म से राज्य तभी अलग हो सकता है जबकि समाज में धर्म का अस्तित्व ही न हो। ऐसे में एक धर्मपरायण राष्ट्र से धर्म के बहिष्कार के रूप में धर्मनिरपेक्षता की कल्पना करना हास्यास्पद है। धर्म के प्रति तटस्थता, इहलौकिकता में विश्वास, अलौकिक

शक्तियों की बजाय विज्ञान व उसकी उपादेयता में विश्वास एवं नैतिकता का धर्म से पृथक्करण, धर्मनिरपेक्ष राज्य की मूलभूत विशेषताएँ मानी जाती हैं। किन्तु आज भी हमारे देश में शिक्षा, कानून, राजनीति, संस्कृति, कला एवं सामाजिक जीवन पर धर्म का काफी प्रभाव है। जिस भारतीय चिन्तन धारा में 'धर्म' को कर्तव्य माना जाता है तथा 'कर्तव्य' को मानवीय गुणों के विकास का उत्कर्ष कहा जाता है, उसमें निरपेक्षता या तटस्थता के लिए गुंजाईश कहाँ है। न्यायालयों में धर्म–ग्रन्थ गीता के ऊपर हाथ रखकर सच बोलने की शपथ ली जाती है तो मन्त्रीगण सत्यनिष्ठा और ईश्वर के नाम पर अपने पद की शपथ लेते हैं। समान नागरिक संहिता के अभाव में विभिन्न धर्मो के अनुयायी अपने परम्परागत धार्मिक कानूनों का पालन करते हैं तो अल्पसंख्यकों द्वारा धार्मिक आधार पर आरक्षण की माँग एवं राजनैतिक दलों व उनके प्रत्याशियों द्वारा परोक्ष रूप से धर्म से जुड़े मुद्दों पर मत माँगे जाते हैं। राजकीय अधिकारियों और मंत्रियों द्वारा सार्वजनिक रूप से धर्म विशेष के समारोहों में भाग लिया जाता है और इनमें धर्म का सार्वजनिक प्रदर्शन किया जाता है। जबकि उनसे आशा की जाती है कि पंथनिरपेक्ष राज्य के अनुरूप वे किसी भी धार्मिक सम्प्रदाय के आयोजनों में भाग लेकर उस सम्प्रदाय को प्रोत्साहित करने से बचें। इसी प्रकार धार्मिक या जातीय पंचायतें एवं फतवे भी धर्मनिरपेक्ष विचारधारा के विपरीत हैं। अधिकतर धार्मिक संस्थायें नैतिक शिक्षा के नाम पर धार्मिक सिद्धान्तों, विश्वासों व कर्मकाण्डों की शिक्षा देती हैं एवं धर्म व नैतिकता में कोई अलगाव नहीं मानतीं।

यदि हम निष्पक्ष विश्लेशण करें तो साम्प्रदायिकता और जातिवाद हमारे धर्मनिरपेक्षता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है क्योंकि यह समाज और शासक दोनों को ही तुष्टिकरण की नीति अपनाने के लिए बाध्य करती है। वस्तुस्थिति यह है कि हमने एक धर्मनिरपेक्ष राज्य को तो अपना लिया है पर धर्मनिरपेक्षता अब तक हमारे सामाजिक जीवन का अंग नहीं बन पायी है। संवैधानिक तौर पर भले ही भारत को धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र घोषित कर दिया गया हो और भारत का कोई राजकीय धर्म नहीं है व न ही धर्म के आधार पर किसी भेदभाव को संविधान प्रश्रय देता है, किन्तु इसके बाद भी संवैधानिक तौर पर भारत भले ही धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र हो पर सामाजिक तौर पर नहीं।

**मो0– 09413666599**

**ई–मेल : kkyadav.t@gmail.com**

ooo

# भारतीय दर्शन

❑ डॉ0 बसन्ती हर्ष

एतद् देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।

—मनुस्मृति (2/20)

अर्थात् इस देश के अग्रजन्मा मानवों से पृथ्वी के समस्त मानवों ने अपने—अपने चरित्र की शिक्षा ली थी।

वस्तुतः महर्षि मनु ने जिस स्मृति की रचना की थी वह ऐतिहासिक शोध के पश्चात् आज भी सर्वत्र खरी उतर रही है तथा सर्वत्र अनुकरणीय व अनुसरणीय हैं।

हमारे भारतवर्ष का बाह्य स्वरुप जम्मू—कश्मीर से कन्याकुमारी तक जितना भव्य व मनोहर हैं उससे भी अधिक अभिराम व सुन्दर इसका आन्तरिक स्वरुप हैं। इस जगतीतल पर सर्वप्रथम ज्ञान का आलोक तथा सम्यता व संस्कृति की किरणों को विस्तृत करने का सर्वप्रथम श्रेय हमारे देश भारत को ही जाता हैं। निश्चय ही हमारे देश की सभ्यता में कुछ ऐसी विशेषताएँ रही होंगी कि जिसके कारण अन्य देशों के मानव ही नही, अपितु स्वर्ग में स्थित देवतागण भी यहाँ जन्म लेने के लिए उत्सुक रहते थे तथा हमारे पूर्वज मनीषीगणों की प्रशंसा करते नहीं अधाते थे।

देखिए श्रीभद्भागवत (स्कन्द 5, इ, 19 श्लोक 22)

**दर्शन का अर्थ उपयोग**

दृश्यते अनेन इति दर्शनम् – अर्थात् जिसके द्वारा देखा जाये।

इस भौतिक जगत् का वास्तविक स्वरुप क्या हैं? इसकी उत्पति व इस जगत के नियन्ता के बारे में जानने की उत्सुकता सर्वत्र बनी रहती हैं। हम कौन हैं, तथा कहां से आये हैं इस संसार में हमारे कर्तव्य व उद्देश्य क्या हैं आदि प्रश्नों के उत्तर को जानने के लिए दर्शन शास्त्र के अध्ययन की आवश्यकता हे। हमारे जीवन को कल्याणमय व सहज तथा सुगम रुप से व्यतीत करना ही दर्शन का प्रधान ध्येय हैं। अतः भारतीय दर्शनकार मानव मात्र के आध्यात्मिक, आधिभौतिक तथा आधिदैविक दुःखों को समूल हटाने की भावना से प्रेरित होता हैं। साथ ही वह अपनी सूक्ष्म विवेचना दृष्टि द्वारा मानव मात्र को सम्मार्ग की ओर अग्रसर करने के लिए प्रयास करता हैं। पाश्चात्य दर्शन के अन्तर्गत किसी वस्तु का अध्ययन करने या जिज्ञासा को पूर्ण करने के लिए सूक्ष्म विवेचना करके केवल मात्र कल्पना के आधार पर कार्य किया जाता हैं। कहने का तात्पर्य यही हैं कि भारतीय दर्शन समस्त विश्व के दर्शन से तुलनात्मक दृष्टि से अधिक व्यावहारिक, कल्याणकारीव सुव्यवस्थित सिद्धान्तों

पर आधारित हैं।`

वस्तुतः इस पृथ्वी पर जन्म लेने वाले प्रत्येक प्राणी को जीवन पर्यन्त अनेकानेक कठिनाइयों से जूझना पड़ता हैं। पद–पद पर हानि लाभ, उत्थान पतन, जय पराज्य आदि परिस्थितियों से सामना करना पड़ता हैं। अन्य प्राणी बिना विचार शक्ति के द्वारा इन कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने का प्रयास करता हैं। इस प्रकार मनुष्य के विचारों व कार्यशैली के अनुरुप ही समस्त कार्य सम्पन्न हो पाते हैं। उसी के अनुसार उसे कार्यो में सफलता या असफलता प्राप्त होती हैं। यही मनुष्य का दर्शन होता हैं जो उसकी जीवन शैली से आजीवन जुड़ा रहता हैं । गीता में भी कहा गया हैं– यो यच्द्द्धः स एव स (17/3) अर्थात् श्रद्धाओं के अनुरुप ही मनुष्य होता हें। इस प्रकार मनुष्य पशुपक्षियों तथा अन्य जीवों से भिन्न नैसर्गिक व प्राकृतिक आपदाओं के वशीभूत न होकर स्व विवेक, धर्म, समुदाय तथा दर्शन के द्वारा विकास के विविध सोपानों को तय करने में सफल होता हैं।

भारतवर्ष में 'दर्शनशास्त्र' जितना लोकप्रिय है उतना शायद ही किसी अन्य देश में हैं। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता हैं कि हमारे देश में धर्म व दर्शन भारतीय जीवनसे अत्यधिक दृढ़ता से जुड़ा हुआ है। भारतीय धर्म की आधारशिला भी दर्शनशास्त्र के आध्यात्मिक तथ्यों पर टिकी हुई हैं। या यह कहा जा सकता हैं कि धर्म व दार्शनिक विचार अन्योन्याश्रित हैं। भगवान श्री कृष्ण ने गीता समस्त विधाओं में अध्यात्म विद्या (विचारशास्त्र या दर्शनशास्त्र) को अपना ही स्वरुप बताकर उसकी महता प्रदर्शित की है।

'अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम्'

**गीता– (10/32)**

जैसा कि कहा जा चुका हैं कि भारतीय दर्शन का मुख्य उद्देश्य मानव मात्र के दुःखों के निराकरण हेतु साधन माग्र द्वारा दिशा निर्देश देना है। दर्शन की यह धारा हमारे देश में वैदिक काल से निरन्तर प्रवाहित होते हुए भारतेतर शुष्क स्थानों को भी आप्लावित करते हुए समान गति से आगे बढ़ रही है। पाश्चात्य दर्शन व विचारों ने इसे मलिन करने का प्रयास किया लेकिन इसकी विशालता व विशुद्धता के समक्ष अन्य सभी देशों के दर्शन को नतमस्तक होना पड़ा । विदेशी पारम्परिक विचारधारा इसकी उन्नति में बाधक नहीं बन सका। इसका प्रमुख कारण यही हैं कि भारतीय दर्शन सदैव बुद्धि की कसौटी पर उचित अनुचित कार्यो को परखकर व्यापकता, उदारता व विवेचना शक्ति हैं, वह अन्यत्र दुर्लभ हैं। यही कारण है कि यहां विपरीत विचाराधाराओं वाले दार्शनिकों यथा सांख्य, योग, कर्म, मीमांसा न्यायिक तथा चार्वाक् आदि निरीश्वरवादी मतानुयायियों को भी उतना ही महत्व दिया जाता हैं, जितना ब्रह्य प्रतिपादक वेदान्त को। प्रतिपक्षी के प्रति श्रध्दा व आदर का भाव भारतीय दर्शन की उदारता व सहृदयता की ही परिचायक हैं। इसके लिए

प्रायः सामान्य तौर पर विपक्षी के मत को पतिपादित करके तत्पश्चात् युक्तियो द्वारा उनके मतों का निराकरण करे खण्डन करने का प्रयास किया जाता हैं। इस प्रकार से हमारे यहाँ अनेकता में एकता के दर्शन होते हैं। सच पूछा जाये तो हमारे देश के मनीषी कुशाग्रबुद्धि पूर्वजों ने समस्त विश्व की विभिन्न क्षेत्रों की पहेलियों को समझने व सुलझाने में जो प्रयत्न किया वह दर्शन के इतिहास में सदैव उल्लेखनीय रहेगा। प्रतिक्षण परिवर्तनशील इस जगत में नित्य सनातन रहने वाली सत्ता विधमान है। हमारे प्राचीन दार्शनिकों ने ब्रह्य व आत्मा का परस्पर सामंजस्य माना है। अतः परब्रह्य को पहचानने हेतु अपने अन्तःकरण में उसी नियामक की सत्ता को अनुभव करना होगा। अपनी आत्मा से साक्षात्कार करके उसे पहचानना आवश्यक है सभी दृटिकोण से आत्मा ही सर्वश्रेष्ठ व सबसे ज्यादा प्रिय वस्तु हैं। श्रुति के अनुसार भी 'आत्मा वा अरे दृष्टवयः' अर्थात् आत्मतत्व का साक्षात्कार करो।

हमारे दर्शन का मुख्य लक्ष्य व उद्देश्य भी सदैव ब्रह्य की प्राप्ति हेतु आत्मा का ज्ञान कराना व अनुभव करना ही रहा हैं। बृहदारण्क उपनिषद् (2/4) के आख्यान में दार्शनिक शिरोमणि याज्ञवल्क्य की कात्यायनी व मैत्रेयी दोनों पत्नियों में सम्पति के बंटवारे के समय विदुषी मैत्रेयी ने इस क्षणभंगुर जगत की समस्त विलासितापूर्ण भौतिक वस्तुओं को ठुकराकर केवल मात्र अमरत्व की प्राप्ति का उपदेश चाहा। वे भारतीय दर्शन व धर्म के उपदेश को आत्मा तत्व के ज्ञान हेतु प्राप्त करके सदा के लिए अमर हो गई।

वस्तुतः मनुष्य जीवन पर्यन्त अनेकानेक बन्धनों से जकड़ा रहता है, जिनका मुख्य कारण अविद्या ही है। यह अविद्या ही समस्त ईर्ष्या, द्वेष, कोध, लोभ, मोह, आदि क्लेशों की जननी हैं। अतः इन सबसे निवृत्ति पाने के लिए दार्शनिक ज्ञान अथवा कहें कि आत्म तत्व को प्राप्त करने की तथा ज्ञान प्राप्ति की महती आवश्यकता है। हमारे मनीषी गुरुजन इस आधिव्याधि युक्त संसार में सुखी रहने हेतु सदैव तत्व ज्ञान को प्राप्त करने की तथा अपनी आत्मा को पहचानने की ही सुन्दर शिक्षा देते आये हैं। हाँ, इसे प्राप्त करने हेतु हमें इन तत्वों का निरन्तर मनन व चिन्तन करना होगा तभी हम हमारे अविद्या रुपी गहरे अन्धकार को दर्शन रुपी ज्ञान तत्व के आलोक के द्वारा छिन्न भिन्न कर पायेंगे। निरन्तर चित्त शुद्धि के लिए योग दर्शन ने अष्ट योगाङ्गों के अनुसरण की आवश्यकता बताई हैं। यम–नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। इन उपायों के सतत् अभ्यास द्वारा ही आत्म तत्व के साथ ब्रहम तत्व का साक्षात्कार सम्भव हो सकेगा। धर्म का उपार्जन व ब्रहम तत्व की प्राप्ति हेतु हमें सब के साथ मन, वचन, व कर्म से मिलकर रहना होगा, यही हमारे दर्शन का मूल मन्त्र हैं।

कहा भी गया हैं–संगन्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्

❍❍❍

# भगवान महावीर की विश्व को देन्

❑ अचलचन्द्र जैन

विश्व की महान विभूतियों में से एक तीर्थकर भगवान महावीर ने मानव कल्याण के लिए जो अमूल्य भेंट दी हैं, वह शाश्वत है, सर्वकालिक है। यदि दुनिया महाबीर के दिए इन सिद्धान्तों को अपना ले तो धरती पर स्वर्ग का निर्माण हो सकता हैं।

**अहिंसा**— भगवान महाबीर की पहली देन है—अहिंसा! अहिंसा का सरल अर्थ प्राणी मात्र को दुःख न पहुंचाना है। अहिंसा का सूक्ष्म रुप मन, वचन और काया से हिंसा नहीं करना है। इसके अलावा अगर आप किसी को चोट पहुंचाते हैं अथवा हत्या करते हैं तो वह प्रत्यक्ष हिंसा हैं। महात्मा गांधी ने भगवान महावीर के अहिंसा के सिद्धान्त को अपनाकर अंग्रेजों के शक्तिशाली राज्य को बिना खून—खराबे के उखाड़ फेंका। इससे समझा जा सकता है कि अहिंसा का सिद्धान्त कितना शक्तिशाली है। यदि अहिंसा को पूरी तरह से जीवन में अपना लिया जाए तो लड़ाई—झगड़े, मारकाट, हत्या आदि समाप्त होकर शान्ति स्थापित हो सकती है। नेल्सन मंडेला ने अहिंसा को अपना कर अफ्रीका को आजादी व रंगभद की नीति से मुक्ति दिलाई। श्री मंडेला ने राष्ट्रपति बनने पर उन लोगों को प्रताड़ित नहीं किया जिन्होंने मंडेला को जेल में रहते हुए बहुत तकलीफें दी थी। इसलिए क्योंकि उन्होंने अहिंसा को अपना लिया था। तात्पर्य यह है कि अहिंसक व्यक्ति अपने शत्रु के प्रति भी द्वेष भाव नहीं रखता है।

**अपरिग्रहः**— संग्रह करने की प्रवृत्ति को परिग्रह कहते है। लालच की वृत्ति से ही परिग्रह का जन्म होता हे, जो दुःख का कारण है। अतः भगवान महावीर ने प्राणी मात्र को दुःख से बचाने के लिए अपरिग्रह का सिद्धान्त दिया। मनुष्य के शरीर के साथ पेट जुड़ा हुआ है ज्ञानियों ने पेट भरने के लिए मना नहीं किया है किन्तु आज का इंसान पेट के साथ पेटी भी भरी रखना चाहता है, क्योंकि उसे केवल पेट भरने से संतोष नहीं होता। अतः वह आवश्यकता से अधिक संग्रह करता है। परन्तु खर्च करने में जो आनन्द है, वह संग्रह करने में नहीं है समूचे विश्व की सच्ची शान्ति अपरिग्रह में है। यह बात हमारे ऋषिमुनि सदियों से कहते आ रहे हैं। हमारे देश में अकाल पड़ने पर झगडुशाह ने अपने सभी भण्डारों की सामग्री दिल खोलकर जनता में बांट दी। अर्थात् वर्षो से अर्जित सामग्री जरुरतमंदो में वितरित कर अपरिग्रह का पालन किया। भगवान महावीर ने लगभग 2600 वर्ष पहले विश्व की जनता को शान्ति के लिए अपरिग्रह का मार्ग बताया था। आज भी उसी अपरिग्रह की आवश्यकता हैं। जीवन में अपरिग्रह अपनाने से न्याय

शान्ति एवं सौहार्द का वातावरण निर्मित होता हैं।

**अनेकान्तवादः**— भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अनेकांतवाद यह बताता है कि हर व्यक्ति की बात में सच्चाई का अंश होता हैं। भले ही उसमें सच्चाई का अंश होता है। भले ही उसमें सच्चाई का प्रतिशत कम या ज्यादा हो। यदि हम यह बात समझ लें तो कभी —भी किसी से विवाद नहीं होगा। समस्त लड़ाई—झगड़ों का अन्त होकर शान्ति का वातावरण बनेगा।

अनेकान्तवाद सामने वाले की दृष्टि को समझने की प्रेरणा देकर समस्या को सुलझाता है। यह सिद्धान्त 'हम ही सही है' का खण्डन करता है, और कहता है कि दूसरों की बात में भी सच्चाई का अंश है। अनेकांतवाद को स्यादवाद, सर्वोदयवाद, समाधानवाद आदि विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। इस सिद्धान्त को यदि जीवन में अपना लिया जाए तो धरती स्वर्ग बन सकती है। भगवान महावीर की इस अमूल्य देन को हम तहे दिल से नमन करते हैं।

**कर्मवादः**— इस दुनिया में चारों ओर अनेक विविधताएँ, दृष्टिगोचर होती हैं। कोई अमीर है तो कोई गरीब, कोई बुद्धिमान है तो कोई मूर्ख, कोई दुःखी हैं। इन सबके पीछे कर्मसत्ता कारण हैं। व्यक्ति अपने कर्म के कारण अपने जीवन में सुख—दुख लाभ—हानि आदि भुगतता हैं। दुनिया में जो कुछ भी घटित होता हैं, इन सबके मूल में कर्मसत्ता विद्यमान हैं। जैन दर्शन के अनुसार इस दुनिया में कर्मसत्ता एक ऐसी सत्ता है, जहाँ किसी की जान—पहचान नहीं चलती। दुनिया के न्यायालय में आदमी रिश्वत देकर छूट सकता है परन्तु कर्मसत्ता के न्यायालय में किए गए कर्म का फल भुगते बिना छुटकारा नहीं होता। विज्ञान के इस युग में कम्प्यूटर भूल कर सकता हैं, परन्तु कर्मसत्ता के कम्प्यूटर में कोई भूल नहीं होती।

जैन दर्शन के कर्मवाद पर चिंतन—मनन करने से ज्ञात होता है कि सुख—दुःख के लिए व्यक्ति के कर्म ही जिम्मेवार होते हैं। जब यह बात ध्यान में आएगी तो गलत कार्य करने के पहले वयक्ति सौ बार सोचेगा। यही बात आत्मा के कल्याण के लिए हितकारी है और आत्मा को जन्म —मरण से मुक्ति दिलाती हैं।

OOO

# 1942 की रानी झाँसी : अरुणा आसफ अली

❑ **आकांक्षा यादव**

देश की आजादी में महिलाओं ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया। कईयों ने तो अपनी जान भी गँवा दी, फिर भी महिलाओं के हौसले कम नहीं हुए। रानी चेनम्मा और रानी लक्ष्मीबाई जैसी वीरांगनाओं का उदाहरण हमारे सामने है, पर जब आजादी का ज्वार तेजी से फैला तो तमाम महिलाएं भी इसमें शामिल होती गईं। इन्हीं में से एक हैं– अरुणा आसफ अली। उनका जन्म 16 जुलाई 1909 को तत्कालीन पंजाब (अब हरियाणा) के कालका में हुआ था। लाहौर और नैनीताल से पढ़ाई पूरी करने के बाद वह शिक्षिका बन गईं और कोलकाता के गोखले मेमोरियल कॉलेज में अध्यापन कार्य करने लगीं। अध्यापन के साथ–साथ वे स्वाधीनता सम्बन्धी गतिविधियों पर भी निगाह रखती थीं और प्रेरित होती थीं। 1928 में कांग्रेसी नेता और स्वतंत्रता सेनानी आसफ अली से शादी करने के बाद अरुणा गांगुली भी पार्टी सम्बन्धी गतिविधियों और स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय रूप से भाग लेने लगीं। शादी के बाद उनका नाम अरुणा आसफ अली हो गया। अरुणा आरंभ से ही तेज–तर्रार थीं, अतः उनसे अंग्रेजी हुकूमत को शीघ्र ही खतरा महसूस होने लगा। अरुणा आसफ अली 'नमक कानून तोड़ो आन्दोलन' के दौरान जेल भी गयीं।

1931 में जब गाँधी–इरविन समझौते के तहत सभी राजनीतिक बंदियों को छोड़ दिया गया, लेकिन अरुणा आसफ अली को नहीं छोड़ा गया। इस पर महिला कैदियों ने उनकी रिहाई न होने तक जेल परिसर छोड़ने से इंकार कर दिया। अंततः अरुणा की लोकप्रियता को देखते हुए ज्यादा माहौल न बिगड़े, अंग्रेजों ने अरुणा को भी रिहा कर दिया। अपने तीखे तेवरों के लिए मशहूर अरुणा ने अंग्रेजों के विरुद्ध कोई भी मौका हाथ से न जाने दिया। 1932 में उन्हें फिर से गिरफ्तार कर लिया गया और तिहाड़ जेल, दिल्ली में रखा गया। पर अरुणा आसफ अली कहाँ शांति से बैठने वाली थीं, वहाँ उन्होंने राजनीतिक कैदियों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार के खिलाफ भूख हड़ताल आरंभ कर दी, जिसके चलते अंग्रेजी हुकूमत को जेल के हालात सुधारने को मजबूर होना पड़ा। रिहाई के बाद भी अरुणा आजादी के आन्दोलन में सक्रिय बनी रहीं।

8 अगस्त 1942 को जब बम्बई अधिवेशन में गाँधी जी ने भारत छोड़ो आंदोलन की उद्घोषणा करते हुए करो या मरो का नारा दिया तो अरुणा आसफ

अली ने भी इसे उसी अंदाज में ग्रहण किया। अंग्रेजी हुकूमत ने इस आन्दोलन से डर कर सभी प्रमुख नेताओं को तुरंत गिरफ्तार कर लिया। पर अरुणा आसफ अली तो गजब की दिलेर निकलीं, वे अंग्रेजों के हाथ तक नहीं आईं। अगले दिन नौ अगस्त 1942 को उन्होंने अंग्रेजों के सभी इंतजामों को धता बताते हुए शेष अधिवेशन की अध्यक्षता की और मुम्बई के ग्वालिया टैंक मैदान में तिरंगा झंडा फहरा कर भारत छोड़ो आन्दोलन का शंखनाद कर अंग्रेजी हुकूमत को बड़ी चुनौती दी। अंग्रेजी हुकूमत ने अधिवेशन में शामिल लोगों पर गोलियां तक बरसाईं, पर अरुणा तो मानो जान हथेली पर लेकर निकली थीं। इस घटना से वे 1942 के आन्दोलन में एक नायिका के रूप में उभर कर सामने आईं। अरुणा आसफ अली की इस दिलेरी और 1942 में उनकी सक्रिय भूमिका के कारण 'दैनिक ट्रिब्यून' ने उन्हें '1942 की रानी झाँसी' नाम दिया। गौरतलब है कि इस आन्दोलन के दौरान जब सभी शीर्ष नेता गिरफ्तार या नजरबन्द हो चुके थे, अरुणा आसफ अली व सुचेता कृपलानी ने अन्य आन्दोलनकारियों के साथ भूमिगत होकर आन्दोलन को आगे बढ़ाया तो ऊषा मेहता ने इस दौर में भूमिगत रहकर कांग्रेस–रेडियो से प्रसारण किया। अंग्रेजी हुकूमत अरुणा आसफ अली से इतनी भयग्रस्त हो चुकी थी कि उन्हें पकड़वाने वाले को पाँच हजार रुपए का इनाम देने की घोषणा की। उनकी सम्पति को जब्त कर नीलाम तक कर दिया गया। इसके बावजूद अरुणा ने हिम्मत नहीं हारी। इस दौरान उन्होंने राम मनोहर लोहिया के साथ मिलकर कांग्रेस पार्टी की मासिक पत्रिका 'इन्कलाब' का संपादन भी किया। 1944 के संस्करण में उन्होंने युवाओं का आह्वान किया कि वे हिंसा और अहिंसा के वाद–विवाद में न पड़कर क्रांति में शामिल हों और देश को आजाद कराएँ। इस बीच उनका स्वास्थ्य भी खराब हो गया तो गाँधी जी ने उन्हें एक पत्र लिखा कि वह समर्पण कर दें ताकि इनाम की राशि को हरिजनों के कल्याण के लिए इस्तेमाल किया जा सके। अरुणा को गाँधी जी का यह प्रस्ताव तात्कालिक रूप से ठीक नहीं लगा और उन्होंने समर्पण करने से मना कर दिया। अंततः अंग्रेजी हुकूमत द्वारा 1946 में गिरफ्तारी वारंट वापस लिए जाने के बाद ही वह लोगों के सामने आईं।

आजादी के बाद भी अरुणा आसफ अली राजनीति और समाज–सेवा में सक्रिय रहीं। 1948 में वे कांग्रेस छोड़कर नए दल सोशलिस्ट पार्टी में शामिल हुईं तो बाद में भाकपा में शामिल हो गईं। 1956 में वे भाकपा से भी अलग हो गईं। अपनी लोकप्रियता की बदौलत 1958 में वे दिल्ली की प्रथम महापौर निर्वाचित हुईं। 1964 में वे पुनः कांग्रेस में शामिल हुईं, पर सक्रिय राजनीति से

किनारा करना आरंभ कर दिया। 1964 में ही उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय लेनिन शांति पुरस्कार भी मिला। राष्ट्र निर्माण में जीवनपर्यन्त योगदान के लिए उन्हें 1992 में भारत के दूसरे सर्वोच्च नागरिक सम्मान पद्म विभूषण से भी सम्मानित किया गया। अरुणा आसफ अली की जीवनशैली काफी अलग थी। वे जनता से जुड़े मुद्दों पर काफी संवेदनशील थीं। यहाँ तक कि अपनी उम्र के आठवें दशक में भी उन्होंने सार्वजनिक परिवहन से सफर जारी रखा। इस सम्बन्ध में एक घटना को उद्धरित करना उचित होगा। एक बार अरुणा आसफ अली दिल्ली में यात्रियों से ठसाठस भरी बस में सवार थीं। बस में कोई सीट खाली नहीं थी। उसी बस में आधुनिक जीवनशैली की एक युवा महिला भी सवार थी। एक आदमी ने युवा महिला की नजरों में चढ़ने के लिए अपनी सीट उसे दे दी लेकिन उस महिला ने अपनी सीट अरुणा को दे दी। ऐसे में वह व्यक्ति भड़क गया और युवा महिला से कहा यह सीट मैंने आपके लिए खाली की थी बहन। इसके जवाब में अरुणा आसफ अली तुरंत बोलीं– "माँ को कभी न भूलो क्योंकि माँ का हक बहन से पहले होता है।" इस बात को सुनकर वह व्यक्ति काफी शर्मसार हो गया। जीवन को अपने ही अंदाज में भरपूर जीने वालीं अरुणा आसफ अली नारी–सशक्तिकरण के क्षेत्र में एक मील का पत्थर हैं, जिनके योगदान को कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि 29 जुलाई 1996 को उनके निधन पश्चात् अगले वर्ष ही 1997 में उन्हें मरणोपरांत भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न से सम्मानित किया गया और उसके अगले वर्ष 1998 में उनकी स्मृति में एक स्मारक डाक टिकट जारी किया गया। आज अरुणा आसफ अली भले ही हमारे बीच नहीं हैं, पर उनके कार्य और उनका अंदाज आने वाली पीढ़ियों को सदैव रास्ता दिखाते रहेंगें। उन्हें यूँ ही स्वतंत्रता संग्राम की "ग्रैंड ओल्ड लेडी" नहीं कहा जाता है।

**ई–मेल : akankshay1982@gmail.com**

**मो0– 09413666599**

ooo

# कन्नौजी लोक संस्कृति और लोकगीत

❑ **कृष्ण कांत दुबे**

कन्नौजी लोक संस्कृति और लोकगीत का दायरा कन्नौजी बोली की तरह अत्यंत व्यापक है। कन्नौज, फर्रूखाबाद, बरेली, बदायूं, शाहजहांपुर, हरदोई और पीलीभीत जिलों के अलावा कानपुर देहात तथा इटावा जिले में भी कन्नौजी का वर्चस्व देखने को मिलता है। पूर्वी सीमा पर 'अवधी' और पश्चिमी सीमा पर 'ब्रज' का संपर्क होने के कारण कन्नौजी की शब्दावली इन दोनों बोलियों से प्रभावित हो जाती है। एक बात और है कि यहां लोक संस्कृति एवं लोकगीतों में अवधी व ब्रज की झलक प्रतिबिंबित होती है। इसका कारण है–राम व कृष्ण से जुड़े प्रसंगों का अनुसरण करना। 'कन्नौज' शब्द 'कान्यकुब्ज' का परिष्कृत रूप है। प्राचीकाल में इसे कुशस्थली, गधिपुरी, कान्यकुब्जपुर, कुसुमपुर, शाहाबाद, जाफराबाद, कनऊज आदि नामों से पुकारा जाता था। आल्हा में इसको 'कनकऊ' से ही संबोधित किया गया है। यहां के सामान्य जन के द्वारा आज भी इसे 'कनकऊ'से ही सम्बोधित किया गया है। यहां के सामान्य जन के द्वारा आज भी इसे कनऊज ही कहा जाता है।

सातवीं शताब्दी के जन–नायक धर्म परायण दानवीर सम्राट हर्षवर्धन व महाराजा जयचंद्र की राजधानी होने के कारण भारतीय इतिहास में कन्नौज का महत्वपूर्ण स्थान है। कन्नौज का गौरव गाथा प्राक–ऐतिहासिक काल तक जाती है। रामायण और महाभारत में इसका उल्लेख 'कान्यकुब्ज ' और 'महोदय' के नाम से कई बार आया है सांतवी सदी में चीनी यात्री ह्वेनसांग ने कन्नौज के विशालत्तम परिदृश्य और मनोरम सौंदर्य पर लिखा– ''नगर लगभग पांच मील लंबा और डेढ़ मील चौड़ा है नगर के सौंदर्य और संपन्नता का अनुमान उसके विशाल प्रसादों, रमणीय उद्यानों, स्वच्छ जल के तालाबों, सुदूर देशों से प्राप्त वस्तुओं से सजे संग्रहालय से किया जा सकता हैं। ''किंतु आज एक छोटे से कस्बे और मिट्टी के ढेर में तब्दील है। इसी ढेर में सम्राट हर्ष और महाप्रतापी जयचंद्र का किला भी दफन है।

पुरातत्व संग्रहालय में कुछ अवशेष उस समय की सत्ता और कला और संस्कृति पहचान देती मूर्तियां सुरक्षित हैं। एक सिक्के की छाप और कला संस्कृति की पहचान देती मूर्तियां सुरक्षित हैं। एक सिक्के की छाप और कुछ मूर्तियों को छोड़कर कुछ भी ऐसा नहीं बचा है जो उत्तर भारत के सबसे प्रभावशाली व शक्तिसंपन्न सम्राट की शक्ति का शिलालेख बन सके।

यह वही कन्नौज है जहां का सम्राट हर्षवर्धन हर साल माघ महीने में संगम

(इलाहाबाद) पर अपना वैभव दीन–दुखियों व कल्पवासियों को दान के रुप में भेंट कर देता था। सम्राट हर्ष प्रतिवर्ष कन्नौज से प्रयाग तक दानोत्सव यात्रा ले जाया करते थे। उनके साथ यह परंपरा भी चली गयी। 10 फरवरी 2002 से पुनः दानोत्सव यात्रा प्रारंभ हुई है।

उत्तर मध्ययुग में शोहरत और देश की सत्ता संघर्ष का केंद्र रहा कन्नौज आज अपनी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक विरासत के बावजूद उपेक्षित हैं । यहां की लोक संस्कृति व लोकगीतों का इतिहास भी यहांके शासनकाल या इतिहास की तरह मानवीय सभ्यता से जुड़ा है। भारतीय संस्कारों की परंपरा का निर्वाहन कन्नौजी लोकगीतों में समावेशित है। जन्म से लेकर मृत्यु तक भारतीय मानव जीवन में जितने भी संस्कार होते हैं उन सबसे संबंधित लोकगीत यहां मिलते हैं। यह बात अलग है कि आज हम इन्हें विस्मृत करने लगे हैं फिर भी गांव की गलियों, झोपड़ियों, मंदिरों और शिवालयों में लोकगीतों के स्वर अक्सर सुनने को मिल जाते हैं।

बात लोक संस्कृति और लोकगीतों की है, इसलिए 'लोक' क्या है? इसका कहां–कहां प्रयोग किस–किस अर्थ में हुआ, इसको भी जानना–समझना आवश्यक है। जब तक हम इसके महत्व को नहीं जानेंगे तब तक लोक संस्कृति और लोकगीतों को नहीं परखा जा सकता है। लोकगीतों को नहीं परखा जा सकता है। लोक शब्द की व्याख्या करते हुए डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा– ''लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम ही नहीं है बल्कि नगरों और गांवों में फैली हुई समस्त जनता है जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नहीं हैं।'' डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल ने लोक को कल्याणमय बताते हुए लिखा– 'लोक हमारे जीवन का समुद्र है। उसमें भूत, भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। वह राष्ट्र का अमर स्वरूप है। उसमें भूत भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। वह राष्ट्र का अमर स्वरूप है। कृत्स्न ज्ञान और संपूर्ण अध्ययन में सब शास्त्रों का पर्यवसान है। अर्वाचीन में मानव के लिए लोक सर्वोच्च प्रजापति है। लोक की धात्री सर्वभूतरता पृथ्वी और लोक का व्यक्त रूप मानव, यही हमारे नए जीवन का अध्यात्म शास्त्र है। इसका कल्याण हमारी मुक्ति का द्वार और निर्माण का नवीन रूप है। लोक, पृथ्वी और मानव इस त्रिलोकों में जीवन का कल्याणत्मक रूप है। आशय स्पस्ट है कि लोक का अर्थ गांवों की संस्कृति व उसमें रहने वाले आम आदमी की अनुभूतियों का व्यक्त करने के साधन से है।

लोक संस्कृति और लोकगीतों के माध्यम से मानव मन की सहज अभिव्यक्ति होती है। उसमें न तो कोई आडंबर है, न ही बनावटीपन। वास्तव में लोकगीत

की आत्म सहज, सरल हृदय की स्पष्ट अभिव्यक्ति है। लोक संस्कृति और ग्राम गीतों को विशाल सभ्यता का उद्घाटन करने वाली शक्ति हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा– 'ग्राम गीत का समस्त महत्व उनके काव्य सौंदर्य तक ही सीमित नहीं है, इनका एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है। एक विशाल सभ्यता का उद्घाटन जो अब तक या तो विस्मृति गर्भ में डूबी हुई है या गलत समझ ली गई है।

यहां के लोकगीतों में केवल एक व्यक्ति की नहीं बल्कि पूरे समाज या समूह की अभिव्यक्ति उद्घाटित होती है। यह अभिव्यक्ति किसी व्यक्ति विशेष को नहीं, पूरे समाज को अपनी भाव लहरियों में बांध लेती है। कन्नौजी लोक संस्कृति का गीतात्मक रूप प्रमुख रूप से संस्कार गीत, ऋतुगीत, जातिगीत, क्रीड़ागीत, श्रमगीत और देश भक्ति–गीत को भव्य मनोरम रूपों में देखा जा सकता है।

भारतीय संस्कृति में जन्म संस्कार को सभी संस्कारों में प्रमुख माना जाता है। इसमें बच्चे के जन्म लेने पर प्रसन्नता व्यक्त करने की रीति हमारे समाज में रही है। कन्नौजी में सोहर या सोहली गीत गाने का सिलसिला रहा है सोहर (जनन) में उल्लास के साथ–साथ प्रसव की पीड़ा की अभिव्यंजना पायी जाती है। एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि अच्छी संतान का होना कर्मो का फल है। जन्मोत्सव पर स्त्रियाँ सोहर गीत गाते समय गर्भ से लेकर बच्चे के जन्म तक की सभी स्थितियों का चित्रण करती हैं।

प्रसव से पूर्व घटनाएं भी सोहर गीत में गाई जाती हैं। जिनमें श्रंगार का अद्भुत चित्रण मिलता है–

संवरा सोवे अटरिया, मैं कौन विधि जाऊं रे!  
सासु ननद, मोरी नान्हें कई बैरनि  
आंगन पलंग विछावै, मैं कौन विधि जाऊं रे, संवरा सोवे अटरिया  
जेठ–जिठानी मोर नान्हे कई वैरन,  
सोवैं दिया जराई। मैं कौन विधि जाऊं रे।

जन्म संस्कार के बाद दूसरा सबसे बड़ा संस्कार अन्नप्राशन आता है जिसे 'पसनी' भी कहा जाता है। इसमें पांच माह बाद बच्चे को अन्न चखाया जाता है। बच्चे के बाबा या दादी उसे रवा का हलवा खिलाते हैं। इस उत्सव में भी सोहर और सारिया गाने का प्रचलन है–

आज मोरे लीपन, पोतन और अन्नप्राशन रे  
सासु अरगन नेवते परगन, नेहर सासुर और अजियाउर और ननियाउन रे।

तीन संस्कार ऐसे होते हें जिनमें एक ही जैसे गीत गाए जाते हैं। पहला– जन्म, दूसरा –अन्नप्राशन और तीसरा– मुंडन संस्कार। बच्चे की आयु के तीसरे वर्ष में मुंडन संस्कार संम्पन्न होता है। इस समय महिलाएं मुंडन गीत गाती हैं।–

सिर गबुआरे बारे ललना/ललना तौ खेले अपने बाबा की कनियां

फिर दादी की गोद मा ललना/सिर गबुआरे बारे ललना

कन्नौज में पंडित्य प्रदर्शन सबसे अधिक देखने को मिलता है। यहां यज्ञोपवीत (जनेऊ) संस्कार का विशेष महत्व है। जनेऊ संस्कार से जुड़े अनेक लोकगीत भी गाए जाते हैं। भारतीय संस्कारों का निर्वाह व वैदिक परंपरा का कुशल अनुकरण देखने को मिलता है। इस संस्कार में व्यक्ति ब्रह्मचारी के रुप में विद्योपार्जन के लिए काशी जाने के लिए तैयार होता है। उस समय उसके गुरु उसको गायत्री मंत्र का गुरुमंत्र देते हैं और उसके अनुसार जनेऊ की पवित्रता बनाए रखने का वचन लेते हैं। साथ ही घर–परिवार व रिश्तेदारों द्वारा उसे मंगलमय जीवन जीने का आशीर्वाद देते हैं। उस ब्रह्मचारी को पलाश की लकड़ी का दंड, मूंज की मेखला, बल्कल का कौपीन और मृगछाला धारण कराई जाती है। कच्चे धागे का जनेऊ भी धारण कराया जाता हैं। उसके ब्रह्मचर्य रुप में विद्यापार्जन जाने के समय माताएं जो गीत गाती हैं उसमें उसमें अनेक चेतावनियां दी जाती हैं–

करुऊ माया मेरी सतुआ और दस लडुआ,

काशी–बनारस जाऊं वेद पढ़ आऊं

काशी लऊ जयौ महादुख पइअऊ

धरही अंजुल (बाबा) विद्या मां वेद पढ़ लीजऊ।

यज्ञोपवीत के बाद विवाह संस्कार की शुरुआत होती हैं। विवाह एक पवित्र और धार्मिक सामाजिक संस्कार होने के साथ–साथ गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने का सबसे श्रेष्ठ द्वार माना जाता है। इससे दो आत्मीय प्राणी धर्म, अर्थ काम, मोक्ष सभी क्षेत्रों में एक–दूसरे के पूरक और सहभागी बनते हैं। विवाह मूहर्त निकाला जाता है और फिर मंडप निर्माण, कलश स्थापना, हवन पूजन पूरे वैदिक परंपरा से संपन्न होता है। बरात की निकासी से लेकर वधू की अगवानी तक अनेक लोकाचार निभाए जाते हैं। उसी लोकाचार में लगुन या तिलक आता है। इस अवसर पर कन्नौजी लोकगीत में एक खास 'लगुन गीत' गाया जाता है। इसमें वर व कन्या पक्ष के लोगों की प्रसन्नता को व्यक्त किया जाता है यथा–

लगुन आई हरे–हरे लगुन आई मेरे अंगना, रघुनंदन फूले न समाई

बाबा सज गए, दादी सज गई, सज गओ सब परिवार

मेरे रघुनंदन ऐसे सज गए जैसे श्रीभगवान
लगुन आई हरे–हरे, लगुन आई मेरे अंगना।

प्रत्येक रीति में लोकगीतों का गायन शुभ माना जाता है। विवाह मंडप में वर और वधू अग्नि को साक्षी मानकर एक–दूसरे के साथ सात फेरे लेते हैं और उम्र भर इस बंधन को निभाने का संकल्प लेते हैं। इस पवित्र रिश्ते के जुड़ने पर जो गीत गाया जाता है उसे देखते ही बनता है–

पहली भाँवर होइ कि धीय बापइ की
दूसरी भाँवर होइ कि धीय बापइ की
तीसरी भाँवर होइ कि धीय बापइ की
चौथी भाँवर होइ कि धीय बापइ की
पांचवी भाँवर होइ कि धीय बापइ की
छठी भाँवर होइ कि धीय बापइ की
सतइ भाँवर होइ कि धीय साजन की
अब धीय पराई भई, जब तक कुँआरी तब तक हमारी।

इन प्रमुख संस्कारों से संबंधित लोकगीतों के अलावा यहां कुछ ऋतुगीतों को भी गाने का प्रचलन है। फाग, चैता, सावन, मल्हार, और बारहमासा गीत अब आधुनिकता के आवेग में विलुप्त हो गए हैं। शहरों में वैसे भी लोकगीतों का रुप बहुत कम मिलता है। ये लोक संस्कृति के संवाहक जिनको 'ग्राम गीत' के नाम से जाना जाता था और यह माना जाता है कि इनका जन्म स्थान ग्राम है, वहा भी अब यह गीत विदाई ले रहे हैं। होली पर अवधी और ब्रज दोनों का प्रभाव देखने को मिलता है। बसंत–पंचमी के दिन से ही होली पर्व की शुरुआत हो जाती है। वैसे भी प्रेम, स्नेह, और भाईचारे को जीवित रहने में होली के रंग का बड़ा महत्व है। कन्नौजी लोकगीतों में जो होली गीत गाया जाता है उसमें अवध के श्रीराम और ब्रज के श्रीकृष्ण का जिक्र कई बार आता है या यूं कहे कि होली गीत इनके बिना पूरा ही नहीं होता। यथा–

होली खेल रहे नंदलाल/ मथुरा की कुंज गलिन मा
गोकुल की गलिन–गलिन मा/ होली खेल रहे नंदलाल।

भर–भर पिचकारी मारे कान्हा के बाद चैता गाकर होली की विदाई की जाती है।

कौन के अंगना पड़ै चैत/राम जी के अंगना पड़ै चैत
उनकी बहुरानी उठत दै बड़निया (झाड़ू) अथओत (सूर्यअस्त) दिय न बारै।

वैशाख और ज्येष्ठ माह की तपिश का अंत आसमान में काले–काले बादलों का उमड़ना और उन्हीं के साथ नन्हीं–नन्ही बूंदों का बरसना वर्षा ऋतु के आने का संकेत देते हैं। वर्षा ऋतु में सावन का महीना सबसे महत्त्वपूर्ण होता है। सावन में ही रक्षाबंधन पर्व भी आता है। कच्चे धागे की राखी को बांध एक बहन अपने भाई से अपनी रक्षा का संकल्प मांगती है। इस महीने में झूला झूलने का लालसा सबको होती है। सबसे अधिक किशोरियों को सावन का रिमझिम बरसना और उसमें नीम की टहनी पर पड़े झूले की हिलोर प्रेरित करती हैं, आमंत्रित करती हैं अपनी ओर। एक किशोरी झूले पर पेग बढ़ाने की जिद करती हुई मां से कहती है–

नन्नी–नन्नी बुदियन में मेह (बादल) बरषै, सब सखी झुलुआ को जाय

कहो तो माया मेरी हमंहु तो जाय। क्रीड़ागीतों का कन्नौजी लोक संस्कृति में महत्त्वपूर्ण स्थान है। गुड़िया, टेसू, झिंझिया और फुलेरा खेल यहां के लोगों के लिए विशेष आकर्षण का केंद्र हैं। गांवों में आज भी ये खेल खेल जाते हैं। गुड्डा–गुड़िया का खेल लड़कियां बड़े स्नेह व भाव से खेला करती हैं। इनका ब्याह रचाते हुए एक–दूसरे को आमंत्रण देती हुई कहती हैं–

आबऊ सखी मिलि खेलऊ गुड्डा–गुड़िया को खेल  
गुड्डा संग रचाबई गुड़िया को ब्याह।

'झिंझिया' को क्वार माह की नवरात्र नौवी से खेला जाता है। माना जाता है कि गुड्डा–गुड़िया के ब्याह और 'झिंझिया' खेल से ही लौकिक संसार के महत्वपूर्ण संस्कार शादी–विवाह का शुभारंभ होता है। कन्नौजी लोकगीत परंपरा में झिंझिया गीत व्यंग्यात्मक शैली में बहुत ही प्रभावात्मक लगता है–

हरे दुपट्टा नीलके धरे अरगनी टांग,  
कै जाय ओढ़े हरे नारायण कै सहदेव।

कन्नौजी लोक संस्कृति में टेसू खेल भी कम आकर्षक नहीं हैं। इससे संदर्भित जो गीत गाया जाता है वह भी व्यंग शैली में ही हैं–

टेसू अगर करै, टेसू बगर करै ,  
टेसू गइया लच पैदरिया (घूंगरु) टेसू लैकै टरै।

होली का आगमन या यह भी कहा जा सकता कि 'फुलेरा' खेल उसके स्वागत में खेला जाता है। फाल्गुन की शुक्लपक्ष द्विज से विभिन्न रंगों, प्रजातियों के फूलों से यह खेल एक आंगन, एक चौक पर बच्चे बड़े उल्लास से खेलते हैं। फुलेरा के फूल और होली के रंग विशेष किसी रंग या जाति से संबंधित नहीं होते। 'होली' ही एकमात्र ऐसा पर्व है जो हर स्थिति में मानवीय एकता और

अखंडता का संदेश देता हैं इसीलिए मां बेटी से कहती हैं–

खेलल बेटी, खेलल बेटी, माई–बाप कै राज
जब धूर दूर जयौ सासुरै सासु खेलन न दै।

संस्कार ऋतु और खेलगीतों के अतिरिक्त कन्नौज में जातीय गीतों का भी बोलबाला रहा।

लोकगीतों की प्रासंगिकता पर ही पं0 रामनरेश त्रिपाठी ने लिखा –ग्रामगीत प्रकृति के उद्‌गार हैं। उनमें अलंकार नहीं केवल रस है, छंद नहीं केवल लय है लालित्य नहीं, केवल माधुर्य है। ग्रामीण मनुष्य के स्त्री–पुरुष के मध्य में हृदय नामक आसन पर बैठकर प्रकृति गान करती है, प्रकृति के वे ही गान ग्रामगीत हैं।'' कन्नौज सातवीं शताब्दी से ही धर्मपरायण और देव उपासना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। कन्नौजी परिक्षेत्र गंगा और जमुना कहीं –कहीं काली नदी व ईशन नदी के मध्य में बसा है। इसलिए यहां गंगा की पूजा–अर्चना का विशेष महत्व है। इसके अलावा धार्मिक मान्यताओं को श्रेष्ठ मानने वाले सम्राट हर्ष ने अपने किले के सम्मुख भगवान शिव की स्थापना की। देवी गीत व भगवान शंकर से जुड़े गीतों पर एक दृष्टि–

सिंह पर सवार हो गई महारानी
सिंह पर सवार मइया बागों गई महरानी।

अपने मंगलमय जीवन और गांव में सुख–शांति के लिए भगवान शिव की भक्ति से परिपूर्ण गीत गाया जाता है–

शीश गंगे धार, गले मुड्‌डो की माल महादेवा, नाथ कैसे करूं तेरी सेवा।

पर्व विशेष पर गंगा स्नान करने के लिए हजारों श्रद्धालु गंगा के विभिन्न घाटों पर जाते हैं। महिलाएं सामूहिक रूप से गंगा की पूजा, आरती करती जीवन के दुख और पापों के नष्ट करने की प्रार्थना के गीत गाती हैं–

मइया मेरी मन्नत पूरी करिअऊ
तऊ हम तुमकऊ पहिनाऊनी पहनइवो।

इन लोकगीतों का न तो कोई संग्रह है, न ही कोई प्रकाशन। यहां की चलती –फिरती जनता ही इनकी सजीवता का प्रतीक है। लोक साहित्य के रुप में भी कन्नौजी बोली का कोई खास स्थान नहीं है। महाकवि जगनिक कृत–'आल्हा' और महाकवि घाघ की लोकोक्तियां जो आज भी सार्थक सिद्ध होती हैं, को यदि छोड़ दिया जाए तो यहां कुछ नहीं बचता। कुछ लोग इसके गौरवमयी सांस्कृतिक और ऐतिहासिक अस्तित्व को बचाने का प्रयास अवश्य कर रहे हैं।

OOO

# विभिन्न देवतागण एवं उनके वाहन

❑ **श्रीमती उमा मेहता**

हमारे देवता संपूर्ण ब्रहमांड में पलक झपकते ही भ्रमण कर लेते हैं, वे शक्ति के स्वरूप हैं। संपूर्ण जगत उन्हीं की शक्ति से चलायमान हैं। हमारे धार्मिक ग्रन्थों में प्रत्येक देवता का एक विशेष वाहन बतलाया गया है। प्रकृति के वाहन देवताओं के स्वभाव उनके कार्य तथा स्थान के अनुरूप बतलाए गये हैं। धर्मप्रेमी जनता देवताओं के साथ ही उनके वाहन रूपी पशु–पक्षी का हम संरक्षण करें। प्रकृति के संतुलन को बनाए रखें। देवपूजन के साथ उनका भी पूजन इन्हीं बातों की ओर इंगित करता है। इस लेख में भगवान के प्रमुख वाहनों का वर्णन हैं।

**मूषक**– यह भगवान श्रीगणेश जी का वाहन है। 'मूष' शब्द का अर्थ है, लूटना या चुराना। चूहा अपनी भूख शांत करने के लिए खाद्य सामग्री चुराता है। वह अच्छे बुरे की पहचान नहीं कर सकता है। अच्छी–अच्छी चीजों को काट देता है, वह कुतर्की है। वस्तुओं को कुतर डालता है। श्री गणेश ज्ञान और बुद्धि के देवता हैं। उनके सामने कोई टिक नहीं सकता है। मनुष्य का मस्तिष्क भी चूहे के समान होता है। श्रीगणेश जी ने कुतर्क करने वालों को अपने नीचे दबा कर रखा है।

**वृषभ**– वृषभ भगवान शिव का वाहन है। शिवजी के गणों में बैल (वृषभ) को श्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। वृषभ स्वभाव से शांत होता है। वह शारीरिक रूप से शक्तिशाली है। वह भगवान शिव के व्यक्तित्व को प्रदर्शित करता है। भगवान शिव शक्ति संपन्न है तथा स्वभाव से शान्त और संयमित है। नंदी के चार पैर धर्म के चार स्तंभ क्षमा, दया दान और तप के द्योतक हैं। नंदी की सफेद रंग पवित्रता तथा स्वच्छता का प्रतीक है।

**शेर**– मां दुर्गा का वाहन शेर है। मां दुर्गा शक्ति स्वरूपा है। उनका वाहन शेर भी बल, पराक्रम शक्ति, शौर्य और क्रोध का प्रतीक है। जिस प्रकार शेर दहाड़ता है और जंगल की शांति भंग हो जाती है उसी प्रकार मां दुर्गा की अन्याय के प्रति हुंकार इतनी विकराल होती है कि, उसके सामने सारी आवाज धीमी प्रतीत होती है। स्त्री को अपने घर को बुद्धि चातुर्य से सुखी बनाना चाहिये। अपनी शक्ति को नष्ट नहीं करना चाहिए।

**मोर**– कार्तिकेय देवताओं के सेनापति हैं। वे शिव पार्वती के पुत्र तथा श्री गणेश के बड़े भाई हैं। मोर, कार्तिकेय का वाहन है। भगवान विष्णु ने कार्तिकेय को यह वाहन के रूप में भेंट किया था। मोर, चंचलता का प्रतीक है। मोर सुन्दर तो है ही

वह सांप को बड़ी चतुराई से मारता है, कार्तिकेय ने चंचल मोर को अपना वाहन बना रखा है।

**हंस**— यह मां सरस्वती का वाहन है। हंस पवित्रता का प्रतीक माना जाता है। माता सरस्वती शुभ्रवस्त्रा है। कहा जाता है कि हंस नीर—क्षीर विवेकी होता है। वह अवगुण छोड़ देता है और गुण को ग्रहण कर लेता है। हंस भी श्वेत रंगधारी है। ज्ञान, जिज्ञासा और पवित्रता के प्रतीक हंस पर सरस्वती विराजित है।

**कौआ**— शनिदेव का प्रमुख वाहन है। वैसे शनिदेव के नौ वाहन हैं। अलग—अलग राशि पर अलग—अलग वाहन का प्रभाव पड़ता है। हंस, हाथी, तथा घोड़े पर सवार शनि का प्रभाव अच्छा होता है। गधे, कुत्ते, गिद्ध, सियार, भैंसा पर सवार होकर जब शनिदेव आते हैं तो कुछ राशियों पर इनका विपरीत प्रभाव पड़ता है।

**अश्व**— समुद्र मंथन के समय उच्चैश्रवा नामक घोड़ा निकला था हमारे पौराणिक ग्रन्थों के अनुसार सूर्य, सात घोड़ों पर सवार होकर पृथ्वी को प्रकाशित करते हैं। घोड़ा मेहनती पशु है। सेना में इनका प्रमुख स्थान है। विवाह में वर घोड़ी पर सवार होकर आता है। पौराणिक ग्रंथों के अनुसार कलियुग में कल्कि अवतार घुड़सवारी करता हुआ आयेगा।

**सफेद हाथी**— इन्द्रदेव का वाहन सफेद हाथी है। वर्तमान में यह लुप्तप्राय है। इन्द्र के हाथी का नाम ऐरावत हाथी है। सफेद हाथी शांत समझदार तथा तीक्ष्ण बुद्धि के लिए प्रसिद्ध है। 'इरा' जल को कहते है। समुद्र मंथन के समय प्राप्त हुए हाथी का नाम ऐरावत हैं। प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार सफेद हाथी के चार दांत होते हैं। कहते हैं, उत्तरी ध्रुव पर किसी समय मानव का निवास था, ऐसा वैज्ञानिकों का दावा है।

**भैंसा**— यमराज का वाहन भैंसा होता है। यम को मृत्यु का देवता कहा गया है पौराणिक ग्रंथों में यम को भैंसे पर सवार बतलाया गया है। कहा जाता है कि भैंसा सामाजिक प्राणी है। कई भैंसे मिलकर एक दूसरे की रक्षा करते हैं। ऐसी मान्यता है कि, भैंसा अपनी शक्तिका दुरूपयोग नहीं करता है। वह आत्मरक्षा के लिए शेर से भी सामना कर लेता है। भैंसे का स्वरूप भयानक होता है यमराज का स्वरूप भी भयानक है। यमराज मनुष्य को उसके कर्मों के अनुसार दंड देते हैं।

**कुत्ता (श्वान)**— कुत्ता (श्वान) भैरव भगवान का वाहन है। प्रमुख रूप से काले रंग का श्वान विशेषरूप से पूजित है। भैरव अष्टमी तथा भैरव जयंती या भेरू पूजन के दिन काले श्वान को ही प्रसाद चढ़ाया जाता है। यह स्वामिभक्त और

विश्वासनीय पशु है। यह अपनी असाधारण घ्राण शक्ति के लिए प्रसिद्ध है। पुलिस विभाग में आपराधिक मामलों में अपराधियों को पकड़ने के लिए विशेष नस्ल के कुत्तों को रखा जाता है। भारतीय घरों में कुत्ते को प्रतिदिन रोटी डाली जाती है। भूकंप आदि प्राकृतिक आपदा में कुत्तें को पूर्वाभास हो जाता है। कुत्ता घर की चौकस चौकीदारी भी करता है तथा स्वामी की रक्षा करता है।

**मगरमच्छ**— गंगा का वाहन मगरमच्छ है, यह नदियों के जल में विचरण करता है। ऐसी मान्यता है कि जल के जीवों में मगरमच्छ 25 करोड़ साल अस्तित्व में है। विद्युत उत्पादन के कारण बांध बनने से जहां नदियों का पानी कम है वहां मगरमच्छ संकट में हैं।

**गरूड़**— भगवान विष्णु के वाहन गरुड़ हैं। विष्णु भगवान शक्तिशाली हैं। गरुड़ भी शक्ति सम्पन्न, बुद्धिमान तथा अपनी दूरदृष्टि के लिए प्रसिद्ध है। प्रजापति कश्यप की पत्नी विनता के पुत्र हैं। इनके दूसरे भाई का नाम अरुण है। अरुण के पुत्र, श्री राम जी के समय जटायु और संपाती हुए। इन्होंने सीताजी की रक्षा एवं खोज में अपूर्व सहायता की थी।

**बकरा**— अग्निदेव का वाहन है। जीवन में अग्नि का जन्म से लेकर मृत्यु तक सम्बन्ध बना रहता है। ऋग्वेद में भी सर्वप्रथम अग्नि का ही वर्णन आता है।

**उल्लू**— उल्लू को मां लक्ष्मी का वाहन दर्शाया गया है। यह निशाचरी प्राणी है और इसे बुद्धिमान माना गया है। यह धन –संपति का पक्षी माना जाता है। इसको कुछ लोग अशुभ मानते हैं। इसकी कई प्रजातियां तो दुलर्भ हो गई हैं। यह रात्रि जागरण करता है। यह अपनी तेज दृष्टि,श्रवण शक्ति, शीत ऋतु में उड़ने की शक्ति, निशब्द उड़ान तथा धीमे उड़ने की कला के लिये प्रसिद्ध है। लक्ष्मी जी ने स्वयं उल्लू को वाहन के रुप में स्वीकार किया है।

इस प्रकार बन्दर, भालू सर्प, गाय, कबतूर आदि कई पशुओं ने भगवान का सामीप्य प्राप्त किया है। हमारे जीवन में भी इनमें से कई पशुओं का महत्वपूर्ण स्थान है। हमें इनका संरक्षण करना चाहिये इनकी हिंसा करने से प्रकृति का नुकसान होगा। मनुष्य का वाहन उसका मन है। मन सर्वाधिक चंचल होता है। यदि वह हमारे वश में होगा तो ही हम जीवन में सफलता प्राप्त कर सकेंगे। शासन द्वारा भी वन्यजीव की सुरक्षा हेतु अनेक कानून बनाये गये हैं। ये जीव हमारे पर्यावरण का सन्तुलन बनाए रखने में सहयोग करते हैं।

❍❍❍

# बेटी बचाओ - बेटी बढ़ाओ

❑ रजनी सिंह

बेटी सृष्टि की प्रथम उत्पत्ति और सृष्टि–सृजन का साक्षात् प्रमाण है। सृष्टि की कल्पना बेटी के बिना असंभव है अर्थात ब्रम्हा सृजन के लिए एक नारी और एक नर का उदय करता है जिससे यह सम्पूर्ण जगत पिता और माता दोनों का रुप है।

सांसारिक जीव कैसे इतना मूर्ख हो गया है कि अपने हाथों अपने पैरों में कुल्हाड़ी मार रहा है। क्या नारी के बिना यह संसार संभव है? क्या नारी के बिना नर का अस्तित्व संभव है, वास्तव में संसार का अस्तित्व नारी और नर दोनों से चलता है तो क्यों एक का विध्वंस किया जा रहा है, यह विषय सभी मानव प्राणियों को चिंतन में लाना चाहिए। बेटी के प्रति दुर्भावना संसार को विनाश के कगार पर ले जा रही है। बहुत शीघ्र बेटी को बचाने के प्रति ठोस कदम न उठाए गए तो वर्तमान भयावह स्थिति विनाश का रुप धारण कर पूरी मानव जाति को अपने दानवी पंजों में जकड़ लेगी। यहाँ हमें बेटी बचाने के लिए उन समस्याओं पर विचार करना है जिससे बेटी को बचाया जा सके, विचारणीय है।

**समस्यायें :**

**1. बच्ची के साथ भेदभाव की भावना :** जिसमें बेटों को ज्यादा महत्व देना रूढ़िवादी और पीड़ित मानसिकता से. ग्रस्त माता–पिता अभी भी बेटियों के प्रति नंबर दो का व्यवहार कर बेटों को यह सोचने का अवसर प्रदान करते हैं कि बेटा –बेटी से ज्यादा मूल्यवान है। उसके रहन–सहन, खाना–भोजन शिक्षा और खर्चे में भेदभाव कर बेटी को सरकारी स्कूल में पढ़ाना और बेटे को पब्लिक स्कूल में जिससे बचपन से ही अपने को 'सुपर' समझ लड़कियों के प्रति दुर्भावना का शिकार हो जाता है। ग्रामीण और छोटे शहरों में यह आम बातें हैं। शहर बदल रहे हैं परन्तु केवल 25: ही हैं।

**2. भ्रूण हत्या**– यह किसी से छिपी नहीं है। जब गर्भ में ही बेटियाँ मारी जायेगी तो सारे समाज में नर और नारी का प्रतिशत डाँवाडोल होगा। साथ ही बेटों को पुनः यह सोचने का अवसर मिलेगा कि मैं अपनी बहिन से मूल्यवान हूँ और फिर प्रताड़ना और बलात्कार जैसी घटनाओं का समाज में खुला ताडंव होगा। लगातार गिर रहा बेटी की संख्या का प्रतिशत अत्यंत दुख और अव्यवस्था का

विषय है।

**3. दहेज प्रथा–** हमारे देश की विडंबना है कि समान प्राणी होते हुए भी स्त्री से ही उसके विवाह पर ससुराल पक्ष अपनी मनमानी मांगों से वधुपक्ष का उत्पीड़न करता है। जब नाजायज माँगें वधुपक्ष आर्थिक अक्षमता के कारण पूरी नही कर पाता तो वधु के साथ अत्याचारों का सिसिला प्रारभ हो जाता है। और ''आत्महत्या'' और 'आग लगाना ' जैसी दर्दनाक घटनाएं बेटी को मृत्यु के घाट पहुंचा देती है।

**4. आर्थिक रूप से पति पर निर्भरता :–** कितना बड़ा मजाक लगता है कि बेटी ससुराल में प्रातः से सायंः समस्त कार्यो को मूर्त रूप से प्रदान करती है और बेटा बाहर जाकर पैसा कमाता है लेकिन बेटी का कार्य गौण और बेटे का कार्य महत्वपूर्ण मानकर कहा जाता हे कि ''पैसा कमाना कोई स्त्रियों का कार्य नहीं''। ऐसे जुमले घरों कमें अक्सर सुनाए जाते हैं। यहीं से प्रारम्भ हो जाता हे आपसी मतभेदों का जन्म और चक्की के पाटों के बीच पिसती है बेटी'।

**5. अशिक्षा–** बेटी शिक्षा की आवश्यकता समस्त अपराधों को रोकने के लिए सटीक उपाय है। अशिक्षित महिला को समाज, देश, परिवार और पति समस्तजन मूर्ख बनाते हैं और उसे दासता का जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य करते हैं। वह दूसरों पर निर्भर रहती है और ससुराल के हाथों का खिलौना मात्र रह जाती है। साथ ही स्वयं उसके बच्चे भी हेय दृष्टि से देखने लगते हैं। अपने सौष्ठव और दक्षता से विश्व स्तर पर सम्मान पा रही हैं। ऐसी बेटियाँ कोई भी माता–पिता बना सकता है केवल और केवल आवश्यकता है मन में दृढ़ संकल्प, जोश, विश्वास और समझ की। बेटी की शारीरिक संरचना कोई निर्बल नहीं है ये तो हम परिवार वाले ही कहकर निर्बल कर देते हैं। जो बेटी बच्चे को जन्म दे सकती है वह कमजोर कहाँ हैं। कुश्ती, बॉक्सिंग, क्रिकेट, बैडमिंटन जैसे खेल और मिलिट्ररी में बंदूक और वेट लिफ्टिंग का भार उठाना जैसे शक्ति सम्पन्न कार्य बेटियाँ कर रही हैं तो कमजोर अबला कैसे कहा जाता है। यह सब बेटी को भ्रमित करने के लिए किया जाता रहा है। बेटी ज्ञान का खजाना और शक्ति का भंडार है। खेती और मजदूरी के कार्यों से लेकर जानवरों का लालन– पालन बेटियाँ बहुत कुशलता से कर रही हैं। कढ़ाई–सिलाई –पेटिंग और अन्य कलात्मक प्रशिक्षणों से सुसंस्कृत बेटियाँ आर्थिक रुप से सक्षम हो रही हैं। हवाई जहाज, युद्ध रक्षक विमान और गाड़ियाँ चलाकर अपनी सामर्थ्य का डंका बजाती

बेटियाँ राष्ट्र की सम्पत्ति बनी हुई हैं। राजनीति और राष्ट्रनीति जैसे मसलों पर पदासीन अपनी सूक्ष्मदर्शी बुद्धि का प्रमाण प्रस्तुत कर रही हैं। दुनिया में कोई कार्य छोटा और बड़ा नही होता, आवश्यकता है मूल्य समझने की। मेरी एक कविता की दो पंक्तियां पेश हैं –

गृह में जितना किया परिश्रम, क्या उसका कोई मूल्य नहीं।
ओ मतवालें इंसा! नारी हूँ, नारी बिन गृह कुछ भी नहीं ।।

**6. बलात्कार और छेड़छाड़ :** दिल तड़प उठता है जब मासूम बच्ची को पुरूष रूपी पिशाच अपनी हवस का शिकार बनाता है। मानसिक रूप से पीड़ित ये पिशाच समाज का कलंक हैं। इनके लिए मृत्यु दण्ड भी छोटा है, इन्हें इसी तरह तड़पाने की आवश्यकता है जिस तरह वो नन्हीं बच्ची तड़पी होगी। परिवार–समाज–देश सभी के लिए यह कोढ़ जड़ से उखाड़ फेंकने को चीत्कार कर रहा है। बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ नारा एक दूसरे का पूरक अर्थात जितनी पढ़ी लिखी बेटी होगी उतनी ही उसकी दृढ़–संकल्प शक्ति होगी। वह अपने जीवन का मूल्य समझेगी और जीवन में आने वाली उलझनों को हिम्मत से सामना कर अपना मार्ग प्रशस्त करेगी। अशिक्षित बेटी हेय और उपहास की दृष्टि से देखी जाती है। और चालाक व्यक्ति उसे बहला फुसला कर अपनी हवस का शिकार बना लेता है। माता–पिता को अपनी बेटियों के प्रति तनिक भी स्नेह और दुलार है तो उन्हें अच्छी शिक्षा दिलाने के लिए वचनवद्ध होना पड़ेगा वरना उनका प्यार झूठा है। हमारे वेद शास्त्र और अध्यात्म ग्रंथ बेटियों को बेटों के बराबर अधिकार देने के लिए घोषणा करते हैं। सीता जी को राजा जनक ने समस्त भारतीय ज्ञान कोषिकाओं की शिक्षा विदुषी गार्गी और अनुसुइया से दिलाई। स्वयं उन्होंने वेद–शास्त्रों के गूढ़ रहस्यों से पुत्री को परिचित कराया। उस युग में सभी नारियां समस्त विद्याओं से परिपक्व हुई पुरूषों से शास्त्रार्थ में विजयश्री प्राप्त करती थीं। यहाँ मेरा ऐसे प्रकरणों का वर्णन करने से केवल यही अभिप्राय है कि बेटियों को सृष्टि के आरम्भ से ही शिक्षित किया जाता था। यह तो मध्यकाल की अंधेरी कालिख ने बेटी को अशिक्षित, असभ्य और कमजोर शब्दों से परिभाषित कर उसका अस्तित्व ही दूषित कर दिया। अब और नहीं, बेटी राष्ट्र की शान है परिवार की जननी है।

'बेटी' शिक्षा की देवी **'सरस्वती'** है, **'बेटी'** धन की देवी **'लक्ष्मी'** है। बेटी शक्ति का भंडार **'दुर्गा माँ'** है। उसका सम्मान मानव जाति का सम्मान है। हमें

उसे उन दैवीय शक्तियों से समानान्तर, मानकर उसकी रक्षा करनी होगी। तभी सच्चे अर्थों में हम कहेंगे कि **'बेटी बचाओ– बेटी पढ़ाओ'** अन्यथा यह सब दिखावा ही होगा। वर्तमान में बेटियों ने उच्च पदों पर आसीन होकर विश्व में नाम अर्जित किया है प्रशासन, प्रबंधन सेवा, व्यवसाय, सूचना, शिक्षा जैसे समस्त क्षेत्रों में बेटियाँ अपनी कुशल प्रतिभा से बेटों को पीछे छोड़ रही हैं। हमें अविलम्ब आवश्यकता है कि बेटियों को बचाने के लिए समस्त वर्ग के स्त्री–पुरूषों को इन समस्याओं के समाधान के लिए युद्धस्तर पर कार्य करना चाहिए। बेटियों की शिक्षा के लिए विशेष रुप से सरकार को कदम उठाकर उन्हें आर्थिक मदद और विशेष सुविधाओं का प्रावधान करना होगा। विकास के युग में भारत जैसे देश में बेटी शिक्षा का प्रतिशत कम होना शोचनीय और शर्मनीय विषय है।

भारत आदिकाल से ही बेटियों को सम्मान और पूज्यनीय स्तर पर सुशोभित करता रहा है लेकिन वर्तमान स्थिति तो बद से बदतर हो रही है। यहां यह समझना अत्यन्त आवश्यक है कि किसी भी राष्ट्र का शक्तिशाली और समृद्ध होना इस बात पर निर्भर करता है कि वहाँ का जनमानस कितना प्रबुद्ध और शिक्षित है। शिक्षित समाज में समास्यायें असहनीय नहीं हैं। लिंग– भेद तो दूर तलक नजर नहीं आता है, राष्ट्र–प्रेम और मानवता जनमानस की जीवन–शैली के अंग होते हैं। कर्तव्य और अधिकारों का प्रतिशत समान तुला पर आंका जाता है शासन और प्रशासन अनुशासित व्यवस्था के अनुसार नियमों पर चलता है। कानून के पालन में शिथिलता नही बरती जाती, संविधान सर्वोत्तम पालनीय होता है। विषय गंभीरता के लिए इन स्तरों पर विवेचन अत्यन्त आवश्यक है। मेरा मानना है कि 'बेटी बचाओ' विषय की प्रासंगिकता वर्तमान में एक ज्वलंत प्रश्न आ बना है जिसके लिए हमें विभिन्न पहलुओं पर दृष्टि समाहित करना होगा अतः उपरोक्त बिन्दुओं को गंभीरता से लेते हुए बेटी पढ़ाओ तभी बेटी बचाओं अभियान, सफल होगा। बेटी को उच्च शिक्षा दिलाकर उसे स्वतंत्र और निर्भीक सोच का मानव बनाना होगा। महान शिक्षाविद् और नॉवल पुरुस्कार से सम्मानित रविंद्रनाथ टैगोर जी का कथन है कि शिक्षा ही अपने पैरों पर खड़ा होना सिखाती है। साथ ही 'एकल चलो' उनका नारा सर्वसार्थक है।

देश की महान हुतात्मा महात्मा गांधी सदैव स्त्री शिक्षा के हिमायती और पुरजोर समर्थक रहे। वास्तव में वो देश जिसकी 50 प्रतिशत आबादी चौके–चूल्हे में अपना जीवन बिता दे, वह कैसे विकसित बन सकता है। हमें अपनी बेटियों को

बचाने के लिए उनके जीवन में आमूल–चूल परिवर्तन करना होगा। नंबर दो की विक्षिप्तता से छुटकारा दिलाने के लिए पुरूषों के समकक्ष अवसर प्रदान करने होगें। स्वतंत्र सोच–चिंतन –मनन और सृजन के लिए अलंकृत करना होगा। नौकरियों में असमान वेतन तथा भेद भाव करने वालों को दंडित करना होगा। भ्रूण–हत्या जघन्य अपराध की श्रेणी में दण्डनीय माना जायेगा। दहेज लोभियों को सजा मिलना तो और भी आवश्यक है। माता–पिता की सम्पत्ति में बेटी का अधिकार तथा स्त्री–धन की सुरक्षा के उपाय जिससे पति या ससुराल वाले जोर जबरदस्ती से ना निकलवा लें। बेटियों को वास्तव में बचाना है तो हमें युद्धस्तर पर अर्थात जिस प्रकार दुश्मन से युद्ध करने में साम–दाम–दण्ड–भेद सारी नीतियाँ लगा दी जाती हैं उसी तरह बेटी बचाओं अभियान के लिए पूरे देश को एक जुट होकर उसके संरक्षण के उपाय करने होगे। यह घटनाएं अर्थात बलात्कार, हत्या हमारे देश में इतनी शर्मनाक हो रही हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय मीडिया भी इनकी चर्चा करने में आगे आ गया है। 2012–13 में निर्भया काण्ड जैसे यौन अपराधों से पूरा समाज आक्रोशित था। घर से लेकर स्कूल– सड़क कहीं भी बेटी सुरक्षित नहीं है। पुलिस और अदालत तक न्याय की गुहार अत्यन्त पेचीदा और दोषपूर्ण हैं। आर्थिक संकट और गरीबी दूसरी तरफ सबसे बड़ा रोड़ा साबित होती है जिससे पीड़ित बच्ची और परिवार निरीह और असहाय मन अनैतिक कदम उठाने को बाध्य हो जाते हैं। बेटियां हमारी धरोहर हैं, परिवार, समाज की निर्मात्री हैं और देश की पहचान हैं। बेटियां देश का गौरव और सम्मान हैं। बेटियां नहीं तो बेटे नहीं।

अतः भारतीयों को यह सत्य शीध्र से शीध्र समझ आना चाहिए कि 'बेटी बचाना' स्वयं को बचाना है। बेटी को उच्च शिक्षा दिलाकर उसे आर्थिक समर्थ बनाने के लिए रोजगार दिलाना, हस्तकारी, दस्तकारी सिखाना तथा भयमुक्त वातावरण प्रदान करना हमारी जिम्मेदारी है। ससुराल में यदि उसे उचित वातावरण नहीं मिल रहा या उसे प्रताड़ित किया जा रहा है तो माता–पिता और भाई का कर्तव्य है कि तुरन्त उसे संरक्षण प्रदान करें और अपराधियों को दण्ड या जैसी भी परिस्थिति हो कदम उठाएं लकिन बेटी को उनके चंगुल से बचाएं बहुत बार ऐसा देखा जाता है कि माता पिता बेटी का विवाह कर सारी जिम्मेदारियों से अपने को मुक्त कर लेते हैं। वास्तव में यह अन्याय की श्रेणी में आता है। विपदा पड़ने पर बेटी का ससुराल या मायका ही अपना संरक्षण स्थल होता है। माता–पिता लडके के विवाह के बाद तो खूब ध्यान रखते हैं लेकिन

लड़की के विवाह के बाद लापरवाही दिखाने लगते हैं, जिसका लाभ ससुराल वाले उठाने लगते हैं याद रखें बेटा और बेटी एक समान हमारे रक्त के कण हैं। दोनों से ये संसार चल रहा है। दोनों देश की अस्मिता के बराबर के साझीदार हैं। नेल्सन मंडेला का कथन था ''किसी समाज का वास्तविक आंकलन इस तथ्य से होता है कि वहां स्त्रियों और बच्चों के साथ कैसा व्यवहार किया जाता है''। वर्तमान में बेटियों के प्रति हो रहे यौन अपराध उनकी जान पर आ बने हैं। मृत्यु–दण्ड घोषित किया जा चुका है लेकिन पुरूष मानसिकता के बदलाव के लिए अमेरिका की तरह पुरूषों द्वारा संस्थाएं बनाकर इन अपराधों को समाप्त करने के लिए सार्थक कदम उठाए जाने होंगे। यौन अपराधों के खिलाफ पुरूष और स्त्री दोनों को ही सम्मिलित प्रयास करने का समय आ गया है। सरकार और पुलिस विभाग द्वारा भी ईमानदार पहल की जरूरत है तभी हम 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओं उद्देश्य में सफल होंगे।

अंत में समाज के पिछड़े, गरीब और अशिक्षित वर्ग के लोगों में जाग्रति अभियान चलाने होंगे क्योंकि इनके बच्चे धनाभाव और निराशा के माहौल से त्रस्त हुए अपराधों के जाल में फँस जाते हैं और मौका पाते ही उन्हें अंजाम दे देते हैं। साथ ही साधु–संतों में झूठा विश्वास बेटियों से अनेक कुकर्म करने के अवसर प्रदान कर रहा है। जिसका शिकार ये हमारी बेटियों ही हो रही हैं। सब तथ्यों पर विचार करने के बाद यही निचोड़ निकलता है कि बेटियों को बचाना है तो आँख, कान, और दिमाग खोलकर शुचिता से लगना होगा और इन्हें खूब शिक्षित करना होगा।

**मो0नं0– 9412653980**

❍❍❍

# एक वृक्ष दस पुत्र समान

❑ **सौजन्यः युग निर्माण योजना**

मत्स्य पुराण में एक कथा आती है, जिसके अनुसार दस कुओं के निर्माण का पुण्य एक तालाब के निर्माण के बराबर, दस तालाबों का निर्माण एक सद्गुणी पुत्र के निर्माण के बराबर, दस सद्गुणी पुत्रों के बराबर पुण्य एक वृक्ष को तैयार करने का माना गया है।

यहाँ पर वृक्षों के महत्व को दरसाया गया है। वेदों, उपनिषदों तथा आर्षग्रंथों में इस संदर्भ मं विस्तृत विवरण मिलता है कि महान ऋषि, तत्वदर्शी किसी महल में नहीं, अपितु वनों एवं वृक्षों के संपर्क में रहकर ही सूक्ष्मदृष्टि संपन्न बने और उन्हीं की छाया में उन्होंने सद्ग्रंथों का सृजन किया था। भगवान बुद्ध को राजमहलों में नहीं, अपितु वटवृक्ष के नीचे बुद्धत्व प्राप्त हुआ था।

अरब राष्ट्र जो इन दिनों विश्व में पेट्रोलियम आवश्यकता की पूर्ति करते हैं, कभी प्राचीनकाल में घने जंगलों का विशाल भू–भाग था। कालचक्र के परिवर्तन के साथ–साथ विशाल वन–संपदा भूमिगत हो गई और ऊसर रेगिस्तान बन गया। यह उनके द्वारा किए गए दुष्कृत्यों की ही परिणति है। वातावरण के निर्माण में वृक्षों का जो महत्व है, उस ओर अब धीरे–धीरे पर्यावरण वैज्ञानिकों का भी ध्यान गया है। वर्तमान खोजों से यह तथ्य उभरकर सामने आया है कि एक पीपल का वृक्ष अपने जीवनकाल में लगभग 2250 किग्रा0 कार्बन–डाइऑक्साइड वायुमंडल से खींचता है और उसके बदले में 1,710 किग्रा0 के लगभग प्राणवायु के रूप में ऑक्सीजन का विसर्जन करता है, जो करीब 6 लाख व्यक्तियों के लिए पर्याप्त है। दुर्भाग्य से ये वृक्ष भी कारखानों के मजदूरों की तरह कुछ घंटो के लिए सांकेतिक हड़ताल कर दें तो सारा विश्व तबाह हो जाएगा।

वृक्षों की महिमा का वर्णन करते हुए भगवान कृष्ण ने गीता के दसवें अध्याय के छब्बीसवें श्लोक में कहा है– ''वृक्षों में मैं पीपल का वृक्ष हूँ।'' इससे स्पष्ट है कि अन्य वृक्षों की अपेक्षा पीपल के वृक्ष में कार्बन–डाइऑक्साइड के शोषण की क्षमता तथा ऑक्सीजन के उत्सर्जन की क्षमता ज्यादा है इस तथ्य को हमारे ऋषि–मुनियों ने भी समझा था। इस कारण धर्म में पीपल के वृक्ष को काटना प्रतिबंधित माना है।

वृक्षों की कमी के कारण ही प्रदूषण की समस्या पैदा हो गई है। यदि वृक्ष लगाकर इसे रोका न गया तो कार्बन–डाइऑक्साइड की अधिकता से वातावरण

में गरमी बढ़ेगी और ध्रुवीय क्षेत्रों की बरफ पिघलकर समुद्र का जलस्तर ऊँचा होने तथा जलप्रलय आने की स्थिति पैदा हो सकती है।

विष्णु पुराण में उल्लेख है कि फल–फूल देने वाले वृक्ष को जहाँ विनष्ट किया जाता है, वहाँ अनावृष्टि, अतिवृष्टि और दुर्भिक्ष जैसे संकट अवश्यंभावी हैं। इसी में आगे कहा गया है कि जिन्हें कुल और धन की रक्षा तथा वृद्धि करनी हो, उन्हें फलदार वृक्षों की रक्षा एवं अभिवृद्धि करनी चाहिए। अग्नि पुराण में वृक्षों की महिमा का स्पष्ट उल्लेख है। उसमें कहा गया है उद्भिदों जैसे उपकारक अन्यत्र नहीं, जो अयाचित बिना किसी भेदभाव और बदले की भावना के पत्र, पुष्प, फल, मूल, वल्कल और काष्ठ तथ मधुरिम छाया से सभी प्राणियों का उपकार करते रहते हैं।

अन्य पुराणों में भी वृक्षपूजा और वृक्षारोपण संबंधी प्रचुर सामग्री उपलब्ध है। वृक्षों का शुभाशुभ, मंगल विधान ब्रह्मवैवर्त पुराण के कृष्णजन्म खंड (अ–102) में उपलब्ध है।

पद्म पुराण में वृक्षारोपण नाम से पृथक अध्याय ही है। इसमें वृक्षपूजन व प्रतिष्ठा का विधान तक उपलब्ध है।

सुप्रसिद्ध पर्यावरणविद् वृक्षमानव डॉ0 रिचार्ड बेकर का कहना है कि सघन वटवृक्षों की वायु में एक विशेष प्रकार की आर्द्रता होती है, जिससे उसके आस–पास के निवासी स्वस्थ एवं सक्रिय बने रहते हैं। पेड़ों के कटते चले जाने से रोगों के संक्रमण की दर बढ़ती चली जाती है। श्वास एवं त्वचा के रोग इसके दुष्परिणाम हैं।

शरीरशास्त्रियों के मतानुसार ऑक्सीजन जीवन का स्रोत है। वातावरण में उसकी कमी न केवल शारीरिक रूग्णता पैदा करती है, वरन अनेक प्रकार के रोगों को भी जन्म देती है। स्वच्छ एवं प्रचुर प्राणवायु के अभाव में मस्तिष्क–संस्थान असंतुलित हो जाता है। फलतः मनः स्थिति विक्षुब्ध, उत्तेजित, आवेशग्रस्त रहती है। आवेशग्रस्त मनः स्थिति की अपराधकृत्यों में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पंजाब में बढ़े आतंकवाद के मूल में वृक्षों का काटना ही मुख्य कारण है। संपूर्ण समस्याओं के समाधान हेतु यूनेस्को के तत्वाधान में इंडोनेशिया में वैज्ञानिकों का एक सम्मेलन हुआ था, जिसमें आस्ट्रेलिया, नीदरलैंड, कनाडा, अमेरिका व ब्रिटेन के विशेषज्ञों ने भाग लिया। सम्मेलन के अध्यक्ष ब्लादीमिर कजीना ने चेतावनी देते हुए कहा– "यदि वृक्ष नहीं रहेंगे तो मनुष्य भी नही रहेगा।" उनके अनुसार अमेरिका में लू, रूस में बाढ़, भारत में

मौसम का अत्यंत अनियमित हो जाना, जगह–जगह बीमारियों, असाध्य रोगों में वृद्धि का कारण वन–संपदा का निर्मम विनाश है। यदि समय रहते नहीं चेता गया तो सहारा रेगिस्तान की तरह स्थिति सारे विश्व की होगी। अतः समय आ गया है; जब हमें वृक्षारोपण को अपनी महत्त्वपूर्ण गतिविधियों में सम्मिलित करना चाहिए। इसके लिए मकानों, जलस्रोत और खेतों के चारों ओर के अतिरिक्त गाँव के मिलन केंद्र एवं पूजा के स्थानों के आस–पास घनी छाया वाले फलदार वृक्ष लगाए जाने चाहिए।

वृक्षारोपण को देवाराधन के समकक्ष पुण्य फलदायी माना गया है। वन्य–संपदा हमारे देश की सांस्कृतिक धरोहर है। हरियाली अमावस्या पर नए वृक्ष लगाने की चिरकालीन परंपरा अपने देश में रही है। इस कार्य को यदि हर गाँव में एक छोटी नर्सरी बनाकर वहाँ से जनोपयोगी; घनी हरीतिमा वाले पौधे वितरित करने वाले कार्य को जोड़ा जा सके, तो चारों ओर हरियाली का साम्राज्य छा सकता है।

इस प्रकार भारतभूमि को निश्चित रूप से अधिक–से–अधिक सुजला, सुफला, शस्य–श्यामला बनाया जा सकता है। वर्तमान समय में इससे बढ़कर पुण्य और हो ही नहीं सकता। वृक्षारोपण ऐसा परमार्थ है, जो मात्र श्रम एवं उत्साह की सहायता से ही संभव हो जाता है। खाली जमीनों पर फलदार एवं जलाऊ लकड़ी के पेड़ लगाए जा सकते हैं। वन्य–संपदा की वृद्धि से (1) अधिक वर्षा होने (2) भूमि का कटाव रूकने (3) जमीन की उर्वरता बढ़ने (4)मौसम का संतुलन बनने (5) उपयोगी प्राणवायु प्राप्त होने (6) फल, छाया एवं लकड़ी मिलने (7) हरीतिमा का उपयोगी मानसिक प्रभाव पड़ने (8) पशु–पक्षियों को आश्रय मिलने जैसे अनेक लाभ हैं। धर्मशास्त्रों में वृक्षारोपण को परमपुण्य बताया गया है।

**सौजन्य : युग निर्माण योजना**

**फोन–0734–2681181**

○○○

# भारतीय समाज में पिता की अवधारण

❑ डॉ0 शारदा मेहता

भारतीय संस्कृति में पिता परिवार की धुरी होता है। उसका स्थान सर्वोपरि है। पांडव वनवास के समय जंगल में घूम रहे थे। प्यास से व्याकुल होने के कारण जलाशय ढूँढ़ रहे थे। उन्हें एक स्थान पर जलाशय मिला। सर्वप्रथम सहदेव जलाशय पर पहुँचा। उसने हाथ में जल लेकर पीने का प्रयास किया। सहसा एक अदृश्य आवाज ने सहदेव से कहा कि मेरे प्रश्नों के उत्तर देकर ही जल ग्रहण करो। परन्तु सहदेव ने जल पी लिया और वह अचेत हो गया। उसके बाद नकुल, अर्जुन, तथा भीम की भी वहीं स्थिति हुई। अंत में धर्मराज युधिष्ठिर आये। अपने चारों भाईयों की मृतप्राय अवस्था देखकर उन्हें शंका हुई। वे भी जलाशय के पास पहँचे। अदृश्य आवाज से उन्होंने परिचय पूछा। वह एक यक्ष की आवाज थी। उसने युधिष्ठिर से अठारह प्रश्न पूछे सही उत्तर प्राप्त होने पर चारों भाई जीवित हो। गये उन प्रश्नों में एक प्रश्न था कि आकाश से ऊँचा कौन है, युधिष्ठिर ने तपाक से उत्तर दिया, 'पिता' वास्तव में सर्वोच्च स्थान पिता को ही प्राप्त है।

पिता बालक को उसकी जीवन यात्रा में सही दिशा प्रदान करते हैं। उसे स्वअनुशासित जीवन व्यतीत करने के लिए प्रेरित करते हैं। वह चाहते हैं कि उनका पुत्र उदंड न बने। सही रास्ता अपनाकर जीवन में उत्तरोत्तर ऊँचाइयों को प्राप्त कर पिता का नाम रोशन करे। पिता की अभिलाषा रहती है कि उनकी सन्तान बलिष्ठ बनें,किसी के सामने झुके नहीं और प्रत्येक समस्या का निदान निडर होकर करे। पिता सर्वदा हर क्षण कदम–कदम पर आने वाली समस्याओं के प्रति सचेत करते रहते हैं। एक सफल पिता की यह हार्दिक अभिलाषा रहती है कि जो कष्ट उन्होंने स्वयं उठाए हैं वह उनकी संतान को न उठाने पड़े। पिता चाहते हैं कि उनकी सन्तान जीवन में किसी से धोखा न खायें और समस्याओं का निदान निपुणता से बिना झुंझलाहट के कर लें। संस्कृत साहित्य के किसी विद्वान कवि ने कहा हैः–

जननी जन्मभूमिश्र जाह्नवी च जनार्दनः।<br>
जनकः पंचम श्रैव जकाराः पंच दुर्लभाः।।

अर्थात् ये पाँच''ज कार'' इस संसार में दुर्लभ हैं। जननी (माता), जन्मभूमि (स्वदेश) जान्हवी (गंगानदी), जनार्दन (भगवान श्रीकृष्ण) तथा जनकः (पिता) इन पांचों का सुख संसार में भाग्यशाली व्यक्ति को ही प्राप्त होता है। भगवान विष्णु

के साक्षात् अवतार श्रीराम को माता कैकेयी के हठ के कारण पिता दशरथ जी वन को भेजते हैं तो भगवान श्रीराम धीर–गंभीर होकर सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं। जननी कौसल्या से वन गमन की आज्ञा माँगने जाते हैं। माता कौसल्या के हृदय की विशालता देखिये–

सरल सुभाउ राम महतारी। बोली वचन धीर धरि भारी ।।

तात जाउँ बलि कीन्हेउ नीका। पितु आयसु सब धरमक टीका।।

अर्थात सरल स्वभाव वाली श्रीरामचन्द्रजी की माता बड़ा धीरज धरकर वचन बोलीं– हे तात! मैं बलिहारी जाती हूँ ,तमने अच्छा किया। पिता की आज्ञा का पालन करना ही सब धर्मों का शिरोमणि धर्म है।

पिता का स्नेह केवल पुत्र पर ही नहीं पुत्री पर भी उतना ही रहता है। मनौवैज्ञानिकों के मतानुसार पिता अपनी पुत्री पर अधिक स्नेह करते हैं। माँ यदि अपनी बेटी को यदा–कदा डाँटती है, दुनियां की ऊँच–नीच के बारेमें उसे कुछ समझाती है तो पिता माँ को एक झिड़की देकर टोक देता है और कहता है कि समय आने पर, जिम्मेदारी सिर पर पड़ने पर मेरी लाड़ली सब कुछ कर लेगी। वह तुमसे भी अच्छी बनेगी। बचपन में मैंने किसी पत्रिका में एक कहानी पढ़ी थी। माता–पिता अपनी लाड़ली के लिए वर तलाश रहे थे। प्रत्येक लड़के में कुछ मीन मेख निकाली जा रही थी। पिता का कथन था कि मैं अपनी वेटी के लिए ऐसा राजकुमार सा वर ढूँढ़ना चाहता हूँ जो मेरी लाड़ली को राजरानी बनाकर रखे और उसे किसी भी प्रकार की कमी न होने दे। मेरी बेटी उसके साथ हमेशा हँसती खिलखिलाती रहे आदि –आदि। बेटी ने पिता के कन्धे पर हाथ रखकर पूछा–पिता जी मेरे नाना जी ने भी आप में ऐसा ही राजकुमार ढूँढा होगा, फिर आप माँ को क्यों हमेशा उलाहना देकर रुलाते रहते हो ऐसी होती है एक पिता की पुत्री के प्रति स्नेहाशक्ति। ससुराल में भी बेटी की बिदाई के समय आर्शीवाद स्वरुप पिता का सिर पर रखा हाथ सर्वदा स्मरण रहता है। पुत्री पिता के सुख–दुःख का सहारा बनना चाहती है, पर वह अपने बाल –बच्चों की व्यस्तता में पिता को याद तो कर ही लेती है। आधुनिक एकल परिवार तथा व्यस्त जीवन शैली ने हमारे संवेदनात्मक मानवीय रिश्तों को समाप्त सा कर दिया है। लिखित पत्रों के माध्यम से भी दूरी बन गई है। केवल फोन तथा व्हाट्सएप पर ही सुख–दुःख के समाचार भेजकर तथा पढ़कर आत्मीयता व्यक्त कर दी जाती है और इसी में सुखानुभूति कर ली जाती है। सब की अपनी–अपनी विवशता है। पुत्र हो या पुत्री पिता परिवार का संबल है और उसका वर्चस्व सर्वोपरि है। आज भी पिता का स्थान परिवार में केन्द्र बिन्दु का है।

OOO

# निकोबारी लोक कथाओं में अभिव्यक्त आस्था और विश्वास

❑ डॉ0 व्यास मणि त्रिपाठी

कहानी कहने–सुनने की प्रथा और परंपरा हर मानव–समुदाय में रही है। लोक–प्रचलित मौखिक कहानियां लोककथा के अंतर्गत आती हैं। इनका प्रमुख उद्देश्य मनोरंजन होता है लेकिन इसके साथ ही शिक्षा, उपदेश, नीति, धर्म आदि गौड़ रुप में जुड़े रहते हैं। लोक कथा जीवन के विविध धागों से बुनी होने के कारण जीवन के विभिन्न पहलुओं को समाहित किये रहती है। सुख–दुःख, आशा–निराशा, आस्था–विश्वास, प्रेम–श्रृंगार, नीति सदाचार आदि विषयों से सम्बद्ध लोक कथाएं सुखान्तता और मंगलकामना से ओतप्रोत होती हैं। मानव–मन में उठने वाली भावनायें परंपरा के प्रवाह में समूचे जीवन–दर्शन को रुपायित करती हैं। निकोबारी लोक कथाओं का भी लगभग यही वैशिष्ट्य है। उनमें निकोबारी जीवन के विविध पक्ष समग्रता के साथ उभरे हैं। लोक जीवन सामूहिकता प्रधान होता है इसीलिए निकोबारी लोक कथाओं में इस तत्व की प्रधानता है। सामुदायिकता अथवा लोकबद्धता केवल अनुष्ठान और मनोरंजनात्मक क्रिया–कलापों तक ही सीमित नहीं होती बल्कि जीवन के निष्कर्षों को अगली पीढ़ी तक पहुंचाने का विधान लिये होती है। आशा–निराशा, हर्ष–विषाद, सुख–दुख यों तो निजी भावनायें हैं लेकिन लोक जीवन में इनकी सामूहिक अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। यही कारण है कि निकोबारी लोक कथाओं में सामूहिकता की भावनाओं का प्राधान्य है।

बंगाल की खाड़ी के दक्षिण पूर्व छठे और दसवें समानान्तर उत्तरी अक्षांश तथा 920 से 940 पूर्वी देशान्तर रेखाओं के बीच स्थित अण्डमान तथा निकोबार द्वीप समूह का एक जिला निकोबार है। यह तीन भागों में विभक्त हैं उत्तरी, मध्य और दक्षिणी क्षेत्र। उत्तरी क्षेत्र के अंतर्गत कार निकोबार और बाटीमालव द्वीप आते हैं। मध्य क्षेत्र में चौरा, तेरेसा, कचाल, नानकौरी, कमोर्टा, ट्रिंकेट, बम्बूका, तेलंगचांग की गणना होती है। ग्रेट निकोबार, लिटिल निकोबार, पिलोमिलो, कोन्डूल और कोबरा आदि द्वीप दक्षिणी क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। निकोबार द्वीपसमूह के ग्रेट निकोबार के मूल निवासी निकोबारी और शोम्पेन हैं जबकि बाकी द्वीपों के मूल निवासी निकोबारी हैं। ये आदिवासी अनादिकाल से इन द्वीपों में रहते आये हैं। निकोबारी समुदाय आज काफी विकसित और उन्नतिगामी समुदाय है जबकि शोम्पेन प्रजाति अभी भी पिछड़ी और प्राकृतिक अवस्था में है।

निकोबारी जनजाति की उत्पत्ति के संबंध में अनेक मत मतान्तर हैं। पूर्वी भारत के उप पहाड़ी क्षेत्रों में रह रहे लोगोंके साथ इनके घनिष्ट संबंधों के कुछ उल्लेखनीय साक्ष्य मिले हैं। 672 ई0 में आइजिंग की टिप्पणियों में, अरब समुद्री यात्रियों के लंकाथालू और मार्कोपोलो के नेकूबराम में इस जनजाति के विषय में जानकारी मिलती है। पेरेबर्के के अनुसार इनके पूर्वज बर्मा के टेनासिरन प्रान्त से संबंधित थे। बोडेन क्लास इनका संबंध मलाया से जोड़ते हैं। आस्टिस जस्टिन ने 'दि निकोबारीज' नामक अपनी पुस्तक में निकोबारी उत्पत्ति से संबंधित कई निकोबारी लोक कथाओं को उद्धृत किया है। उनका मानना है कि निकोबार द्वीप समूह के भिन्न–भिन्न द्वीपों में निकोबारी–जन्म संबंधी भिन्न –भिन्न लोककथाएं है।

यहां यह उल्लेख आवश्यक है कि निकोबार समूह के भिन्न–भिन्न द्वीपों की निकोबारी प्रजाति का मूल वंश एक ही है भले ही अलग–अलग द्वीपों में रहने के कारण उनकी आकृति, भाषा और रीति–रिवाज में थोड़ा–बहुत अन्तर है। जहां तक बोलियों की बात है तो ई.एच. मान के अनुसार निकोबार वर्ग की छह बोलियां हैं– कार निकोबारी, चौरा, बोली, नानकौरी, लिटिल निकोबारी, कुंडली और ग्रेट निकोबारी। इन्हीं बोलियों में निकोबारी समुदाय की लोक कथाओं और लोक साहित्य का विपुल भंडार है। यद्यपि हर मानव समुदाय की कथाओं को एक ही साँचे में रखकर अध्ययन नहीं किया जा सकता तथापि उनमें कुछ समान तत्व होते हैं जो मूल्यांकन की समान भूमि तैयार करते हैं। कहानी कहने–सुनने की प्रवृत्ति हर मानव समुदाय में होती है लेकिन विषय–वस्तु और शैली में भिन्नता परिवेश के कारण आती है। इसीलिए अलग–अलग परिवेशों और अलग–अलग भाषाओं की कथाओं का मूल्यांकन एक मानदंड पर नहीं हो सकता, फिर भी कुछ ऐसे समान तत्व होते हैं जो सभी कथाओं में किसी न किसी रुप में विद्यमान रहते हैं। उन्हें आधार बनाकर सभी लोक कथाओं के कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

भारतीय लोक कथाओं के संदर्भ में निकोबारी लोक कथाओं के अध्ययन एवं मूल्यांकन का यही आधार हो सकता है। लोक कथाओं के वर्गीकरण के दो आधारों की ओर डॉ0 स्टिथ थोप्सन ने संकेत किया हैं–वे हैं– सरल कथाएं और जटिल कथाएं। इसी आधार पर उन्होंने लोक कथाओं को पांच वर्गो में विभाजित किया है–परी कथाएं, पशु–पक्षी कथाएं, नीति कथाएं, पुराण कथाएं और स्थानीय परंपरागत कथाएं। डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय ने भोजपुरी लोककथाओं

का वर्गीकरण इस प्रकार किया है– उपदेशात्मक, मनोरंजनात्मक, व्रतात्मक, प्रेमात्मक, वर्णनात्मक, और सामाजिक। विषय–वस्तु शैली और उपयोगिता आदि की विविधता के कारण लोक कथाओं का वर्गीकरण आसान नहीं हैं फिर भी उपदेशात्मकता, प्रेमाभिव्यक्ति नीति–कथन, मनोरंजन आदि कुछ ऐसे आधार हैं जिन पर वर्गीकरण किया जा सकता है। निकोबारी लोककथाओं में विषय की विविधता है इसीलिए उसका वर्गीकरण सहज नहीं है फिर भी इन्हें पांच कोटियों में रखा जा सकता है –जन्म और उत्पत्ति संबंधी, रुपान्तरण संबंधी, उपदेश संबंधी, मनोरंजन, और समारोह संबंधी तथा आस्था और विश्वास संबंधी। निकोबारी लोककथाओं की अपनी निजी विशेषताएं हैं जो यहां के परिवेश से उपजी हैं। जाहिर है साहित्य चाहे लिखित हो अथवा मौखिक–उसमें परिवेशगत यथार्थ किसी न किसी रुप में अवश्य समाहित रहता है। निकोबारी लोक कथाओं में परिवेश एवं जीवन का यथार्थ परम्परागत चिंतन के साथ उभरा है।

इन लोक कथाओं की विशेषता कथ्य की सहजता एवं कलेवर की संक्षिप्तता है। इनमें उपयोगिता एवं आवश्यकता का दृष्टिकोण सदैव सक्रिय रहा है। काल–प्रवाह में निकोबारी लोककथाओं में यत्किंचित परिवर्तन और परिवर्धन संभव है किंतु अविनाशी होने के कारण वे समाप्त नहीं हो सकतीं। उनमें संचित जीवन–मूल्य, आस्था और विश्वास, युगबोध तथा संदेश भावी पीढ़ी के विकास में अपने ढंग से सहायक सिद्ध हो सकते हैं। निकोबारी लोक कथाओं में जन–जीवन आदिम राग के साथ मौजूद है। निकोबारी समुदाय की उत्पत्ति कैसे हुई – इस संबंध में कई लोक कथाएं निकोबार के विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न ढंग से पायी जाती हैं। 'नारियल की उत्पत्ति' कथा में नारियल के उद्‌भव की कहानी है। 'कैसे पैदा हुए चमगादड़' इसका उल्लेख इसी शीर्षक की लोक कथा में है। यहां तक कि शार्क मछली के जन्म से संबंधित कथा भी निकोबारी समुदाय में कही–सुनी जाती है।

रुपान्तरण संबंधी अनेक कथाएं निकोबारी लोक साहित्य की धरोहर हैं। 'काले पत्थर' शीर्षक लोक कथा का सारांश यहां दिया जा रहा है ताकि रुपान्तरण संबंधी निकोबारी– विश्वासों को समझा जा सके– काफी समय पहले की बात है– पुलो–बाबी गाँव के कुछ लोग नाव बनाना चाहते थे। अतः लकड़ी काटने के लिए वे जंगल में काफी दूर निकल गए। संयोग से वे ऐसी जगह पहुंच गए जो निषिद्ध क्षेत्र था। उन्हें इस बात का बिल्कुल ध्यान नहीं था कि वह वर्जित क्षेत्र है और वहां लकड़ी काटने पर उनका अनिष्ट हो सकता है। उन्होंने निर्द्वन्द्व

भाव से अपने मन पसंद की लकड़ी काटी जो मजबूत और अच्छी नाव के लिए सर्वाधिक उपयुक्त थी। नाव बनाने की जो कला उन्हें मालूम थी उसका भरपूर प्रयोग करते हुए उन्होंने इच्छानुकूल नाव बनायी। उसकी बनावट में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी। नाव बन जाने के बाद उन्होंने उसे समुद्र में उतारा। अभी नाव पानी में उतरी ही थी कि अचानक बिजली गिरी। जो लोग नाव बनाये थे वे काला पत्थर बन गए। वह नौका भी काले पत्थरों में रुपान्तरित हो गई। निकोबारी समुदाय का विश्वास है कि पुलोबाबी से लगभग तीन किलोमीटर की दूरी पर वे पत्थर छितराये हुए देखे जा सकते हैं। इस समुदाय के लोग बुरी आत्मा में विश्वास रखते हैं। उनका मानना है कि आत्माओं के दो वर्ग हैं–सि–ओ अथवा इवीं और मा–आ–लाहा अथवा इवे। इनमें से पहली हितकारी है मा–आ–लाहा कभी उदार तो कभी अनुदार है। बुरी आत्माओं की शांति के लिए टोटकों और ओझा–गुनियों की मदद ली जाती है।

एक लोक कथा के अनुसार निकोबारी मान्यता है कि चन्द्रमा एक अजगर द्वारा निगल लिया जाता है इसलिए वे टिन इकट्ठा करके बजाते हैं तथा अजगर से यह निवेदन करते हैं कि वह चन्द्रमा को उगल दें।

लोक कथाएं मनोरंजन के साथ–साथ शिक्षा और उपदेश भी देती हैं। निकोबारी लोक कथाओं में भी यह भी विशेषता देखी जा सकती है। 'पहले चलते थे पेड़' शीर्षक लोककथा में निकोबारी आस्था और विश्वास के साथ–साथ शिक्षा और उपदेश भी हैं लोगों की मान्यता है कि पहले पेड़ चलते थे। लोगों की वस्तुएं एक स्थान से दूसरे स्थान पहुंचाया करते थे किंतु एक बार ऐसा हुआ कि लोगों ने काफी सामान लादकर गंतव्य तक पहुंचाने का निर्देश दिया। बोझ इतना भारी था कि उसे चलने में कठिनाई हो रही थी फिर भी वह गंतव्य की ओर गतिशील था। पेड़ के पीछे–पीछे चल रहे लोगों को पेड़ की असमर्थता पर हंसी आ गई। वे उसका मखौल उड़ाने लगे। इस पर पेड़ को क्रोध आ गया। उसने चलना बंद कर दिया। तभी से पेडों का चलना रूक गया। यह लोक कथा इस बात की पुष्टि करती है कि व्यंगात्मक उपहास किसी को भी बुरा लग सकता है। अतः इससे बचना एवं शालीन व्यवहार करना अपेक्षित है। पेडों के प्रति सम्मान का भाव भी प्रकट होता है।

समारोहों अथवा सहभोजों के आयोजन में निकोबारी लोग काफी रूचि प्रदर्शित करते हैं। इनके यहां हर महीने कोई न कोई समारोह आयोजित होता

रहता है। मृतक की आत्मा को खुश रखने के लिए ये लोग 'ओसुरी पर्व' मनाते हैं जिसका उल्लेख कई लोक कथाओं में हुआ है। 'प्रतीक्षा' शीर्षक लोककथा में एरॉंग और शोआन की याद में 'ओसुरी पर्व' मनाये जाने का वर्णन है तो 'तात्–ता–रांग' नामक कथा में भी इसकी झलक है। वापसी लोककथा में' 'किलफ्यूट' की याद में ओसुरी पर्व मनाया जाता हैं जबकि वह जीवित घर वापस लौट आता है इन लोगों का मानना है कि स्वाभाविक मौत बुढ़ापे के कारण होती है लेकिन किसी नौजवान की मृत्यु होने पर उसमें बुरी आत्माओं या शैतान का हाथ होता है। निकोबारी लोगों में मृत्यु संस्कार बहुत विशद होता हैं। ऐसा लगता है कि इस जनजाति के मन में मृत्यु ने काफी भय उत्पन्न किया होगा अथवा बुरी आत्माओं या शैतानों के शमन के लिए अथवा मृत व्यक्ति की परलोक यात्रा को निर्विध्न करने के लिए इतने व्यापक पैमाने पर यह संस्कार किया जाता है। मृतक के शाप से बचने तथा उन्हें खुश रखने के लिए निकोबारी तीन–चार वर्षो में एक बार शानदार भोज का आयोजन करते हैं। 'ओसुरी पर्व' मृतक की याद में मनाया जाता है जिसमें नृत्य–गान एवं शानदार भोज की व्यवस्था रहती है इसमें हर गांव के लोग आमंत्रित किये जाते हैं।

समारोह में शामिल होने के लिए हर अभ्यागत अपने साथ भोज्य सामग्री लाता है। सभी लोग मिलकर एक साथ भोजन करते हैं। इस समारोह की एक विशेषता सुअरों की लड़ाई है। ग्राम को आकर्षक ढंग से सजाया जाता है। भोज शाम को होता है लेकिन अतिथि सुबह से ही आने लगते हैं। खूब चहल पहल रहती है। निकोबारी लोक कथाओं में नौका और सुअर का उल्लेख बार–बार हुआ है। निकोबारी लोगों के जीवन में इनका विशेष महत्व है। नौका इनके लिए सुख और समृद्धि का द्योतक है। सुअर, प्रेम प्रसन्नता और आनंद का स्रोत है। इनमें संबंधित समारोहों के आयोजन बड़ी धूमधाम से होते हैं। निकोबारी जीवन में कई तरह की रुढ़ मान्यताओं, अंधविश्वास और लोकाचार प्रचलित हैं। आत्मा के संबंध में इनकी अपनी सोच है। गर्भ–धारण संबंधी विश्वास और मान्यताएं हैं समुद्र में मछली पकड़ने जाते समय क्या खाने योग्य है, क्या नही इससे संबंधित आस्थाएं हैं। कुत्तों के भौंकने को लेकर भी कई तरह के विचार हैं। चंद्र ग्रहण क्यों लगता है? इससे संबंधित इनके अपने चिंतन हैं।

निकोबारी लोक कथाओं में इनकी अभिव्यक्ति किसी न किसी रुप में हुई है 'चाँद पर टोकन' शीर्षक लोककथा में चाँद पर दाग के कारणों का उल्लेख है। इस कथा के अनुसार अपनी माँ की उपेक्षा की शिकार टोकन नामक निकोबारी

लड़की मकड़ी के जाले के सहारे चाँद पर पहुंचने में सफल हो गई। वह अपने साथ जो बक्सा ले गई थी उसका तकिया बनाकर चाँद की सतह पर सो गई। उसे अपनी बहन टो–पेट–डेन के चन्द्रमा पर आने की प्रतीक्षा है। निकोबारी लोगों को यह विश्वास है कि चन्द्रमा पर जो दाग है वह वस्तुतः टोकन की छायाकृति हैं।

सूरज, चाँद और तारों के बारे में निकोबारी अवधारणा को प्रकट करने वाली अनेक लोक कथाएं हैं। एक लोक कथा के अनुसार हजारों वर्ष पहले रुपान्तरण के क्रम में चांद सूरज बन गया और सूरज चांद, जिससे गर्मी बढ़ गई। निकोबारी पूर्वजों ने धरती के काफी पास आ गये आकाश को भीषण गर्मी के कारण मानकर आसमान और धरती के बीच काफी दूरी बनाने के उद्देश्य से आसमान में तीर छोड़ने का कार्य तब तक जारी रखा जब तक कि उनके बीच लम्बा फासला नहीं आ गया। उन लोगों ने जो तीर आसमान में छोड़े थे उनमें से अधिकांश वापस नहीं लौटे। वे आकाश में ही चिपके रह गए। वे सभी तीर–ता–चोई के बने हुए थे। अग्नि की ज्वाला में वे फटे नहीं । इनके विपरीत चा–लुओक से बने जो तीर छोड़े गए थे, उनमें बिजली जैसी चमक पैदा होती थी। जो तीर आग की ज्वाला में फट पड़ते थे उनमें बिजली जैसी चमक पैदा होती थी। जो तीर आग की ज्वाला में फटे उनसे नक्षत्रों का निर्माण हुआ। निकोबारी लोगों का विश्वास है कि वे ही तारे चमकते और लोगों दिखाई देते हैं।

निकोबारी लोग पाताल लोक की कल्पना से अपरिचित नहीं रहे हैं। 'वे लोग और बौनों की दुनिया' नामक लोककथा में पाताल लोक की कल्पना है। आधुनिकता और भौतिकता के संपर्क में होने के कारण निकोबारी लोगों के आचार–विचार और चिंतन –धारा में आज काफी बदलाव आया है फिर भी उनके जीवन के विविध आयामों, आस्था–विश्वासों को समझने में लोक कथाओं के अवदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता।

❍❍❍

# लोक जीवन की गाथा है: हरेली पर्व
## (छत्तीसगढ़ का प्रथम त्यौहार)

❑ डॉ0 फूलदास महंत

भारत गाँवों का देश है, गाँव की गलियों से लेकर गलियारों तक हँसते, खेलते, खिल खिलाते नन्हें, मुन्ने बच्चों को देख किसका मन प्रफुलित नहीं हो उठेगा। हरियाली प्रकृति की आल्हादित शक्ति व सामर्थ्य की अदह एक पहचान ही तो है। भारत का जनमानस पूरी तरह शक्तियों पर ही अवलम्बित है। यह शक्ति की अराधना कई–कई रूपों में यहाँ की जाती है। यह शक्ति कृषकीय जीवन की गाथा बनकर जब उपस्थित होती है तब वही भारत को कृषकीय प्रधान देश के रूप में अभिव्यक्ति देती है।

हरेली पर्व लोक जीवन की आल्हादित शक्ति की अभिव्यक्ति है। इस त्यौहार को मनाने का तात्पर्य भीषण गर्मी से उपजी तपन के बाद वर्षा होने से हरियाई हुई धरती के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने का त्यौहार है। इसीलिए इसे "हरेली" नाम दिया गया है। यह त्यौहार छत्तीसगढ़ में मूलरूप से मनाया जाता है। छत्तीसगढ़ में धान की खेती प्रमुख रूप से आदिम रूप से की जाती रही है। इसीलिए छत्तीसगढ़ को "धान का कटोरा" के नाम से जानते हैं। इसके लिए कविता भी बनी है–

"छत्तीसगढ़ लकइयों भइयों। धान के कटोरा हे,।।
मोरा लक्ष्मी दाई के कोरा हे। धान के कटोरा है,।।

छत्तीसगढ़ वनाच्छादित प्रान्त होने से अपनी प्राकृतिक ईश्वरीय प्रदत्त शक्तियों के कारण आज भी वनस्थली, तपोभूमि साधना एवं कर्म भूमि के रूप में पर्वतीय पठारों अखण्ड़ जंगलों से रमणीय है, मन को शीतल शांति देने वाली है, इसीलिए यहाँ के लोग बहुत सीधे, सरल, शांत एवं धीरज रखने वाले होते हैं। छत्तीसगढ़ का प्रथम त्यौहार के रूप में बड़े धूम–धाम से मनाया जाने वाले त्यौहार में हरेली (हरियाली पर्व) पर्व अपनी कई विशेषताओं के लिए सुविख्यात है।

1. खेती किसानी कार्य लगभग पूर्ण होने के फलस्वरूप कृषक अपने कृषि कार्य में उपयोग में आने वाले औजारों में नागर, जवाणी, सुमेला, लोहा, गैंती, फावड़ा, कुडाली, हँसिया, बसुआ, आरी अन्य सभी की धुलाई–साफ–सफाई कर अपने घर के आँगन में एक स्थान पर रखकर दीप–धूप, अगरबत्ती, घी,

गुड़, गुगुर, नारियल, चावल, आटे से बनाये हुए चीला (गुड़ मिला हुआ) मीठा से पूजा अर्चना कर भोग लगता है तथा चावल आटा का रोगन तथा सिन्दूर गुलाल उत्साह शुद्वता का प्रतीक धूपदीप दिखा कर पूजा अर्चना करते हैं। प्रसाद वितरण नारियल फोड़कर किया जाता है।

2. अपने घरों में कुल देवता और ग्रांम देवता ठाकुरदेव, हरदेव बालट, गाँव गुँसाईन, जलदेवती मइया आदि की पूजा की जाती है। कुछ लोग मुर्गे, बकरे की बलि भी देते हैं जो पूजा विधान के विकृत रूप का पर्याय बनकर अब कम होने लगा है।

3. हरेली पर्व को कुछ लोग "गेंड़ीन्तिहार" के नाम से भी जानते हैं। इसी दिन "वाँस और कारी" की लकड़ी से ''गेंड़ी बनाया'' जाता है। इसका उपयोग ज्यादा तर बच्चे लोग करते हैं और शक्ति और कला प्रदर्शन के रूप में इसमें चढ़कर हाथ और पैर का बैलेंस बनाकर कलाबाजी का प्रदर्शन करते है। यह भी शक्ति एवं कला, अपने छत्तीसगढ़ी कला साधना का प्रदर्शन है। इससे बरसात में हाथ पैर की सुरक्षा शुद्वता की रक्षा की जाती है।

4. गाँव का हरेली अब शहरों में वैश्वीकरण के रूप में गेंडी नृत्य, हरियाली के रूप में औषधीय एवं शरीर, मन, तन की शुद्वता के रूप में "नीम पत्ता का डाल" मोटर गाड़ी, रिक्शे, आटो में प्रातः से शाम के 10 बजे तक लगाये हुए एवं घर–घर के दरवाजों में लगाकर सम्पूर्ण कार्य भर के लिए घर–परिवार के लिए निरोग रहने की भी प्रेरणा लेकर नीम के हरे डाल लगाये जाते हैं।

5. किसान का पक्का साथी कृषि कार्य के लिए बैल, भैंस, गाय होती हैं इसलिए इस पर्व के दिन विशेष रूप से यादव समाज के लोग या घर मालिक आटा के साथ बगरंडा की पत्ती, सैंधा नमक मिलाकर खिलाते हैं इससे वर्षा के मौसम में होने वाली बीमारियों से मुक्ति पायी जाती है। गाँव में जड़ी–बूटियों तथा वनौषधियों के ज्ञान रखने वाले वैद्यक लोग रसमूल (शतावर), जंगली प्याज (वन गोरखी) का सेवन कराकर मनुष्यों को भी बीमारियों से लड़ने की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं।

6. "हरियाली" पर्व पर "चरोटा" नामक भाजी का सेवन करते हैं यह ग्रामीणों का पौष्टिक आहार है।

7. इस पर्व में अब खासकर शहर में "नारियल फेंक" कार्यक्रम जोरों से होता है। यह भी शक्ति प्रदर्शन का तरीका है।

8. हरेली पर्व पर यादव समाज के लोगों की सेवा गाय, बैल, भैंस के सेवक के रूप में मानकर अन्नदान, दान, पैसा देकर किया जाता है यह एक परम्परा है इस त्यौहार की।

9. मूलतः यह त्यौहार प्रकृति पूजा की तिहार– हरेली तिहार है। किसान अपने वर्ष भर की हानी की कार्य का सुखद–फल की आशा ईश्वर पर वर्षा रानी पर छोड़ता है और कृषि कार्य में प्रयुक्त सभी चीजों की पूजा प्रथम त्योहार मानकर प्रारम्भ करता है।

10. हरियाली में किसान अपने लहलहाते फसल, रिमझिम वर्षा की फुहार, मोर के नाचने एवं उसकी आवाज से भीतर ओर बाहर से भी खुश होता है। यह पर्व लोक जीवन, लोक संस्कृति और लोक–पर्व का समावेसित स्वरूप है जो आज नये संदर्भो के साथ भी जुड़ता जा रहा है। ''गैडी–नृत्य'' ने अब भारत में अपनी छत्तीसगढ़ की संस्कृति के रूप में बना ली है।

11. हरेली श्रावण मास की अमावस्या को ही मनाया जाता है, इसलिए यह तन, मन एवं साधना के रूप में भी बहुत महत्व पूर्ण स्थान रखता है।

12. हरेली पर्व पर पूरे छत्तीसगढ़ के गावों में सन्ध्या समय बल एवं शक्ति प्रदर्शन के रूप में छत्तीसगढ का ऐतिहासिक खेल कबड्डी का प्रदर्शन किया जाता है, पूरे ग्रामीण शारीरिक कला, सौष्ठव एवं बल प्रदर्शन के इस अद्भुत समागम खेल को देखने उमड़ पड़ते हैं।

**निष्कर्षतः** हरेली पर्व, लोक पर्व, लोक जीवन एवं भारत/छत्तीसगढ की गाथा की अभिव्यक्ति हैं। इसमें हर्ष, उल्लास आनंद मन को मोह लेता है।

**मो0नं0– 9685903254**

ooo

# जैविक खेती बनाम रासायनिक खेती

❑ **डॉ0 वीरेन्द्र कुमार**

कृषि क्षेत्र में हरित क्रान्ति (1966–67) के साथ ही भारत के खेतों में यूरिया का प्रयोग तेजी से बढ़ा है, शुरूआती दौर में इसने फसलों का उत्पादन तो बढ़ाया लेकिन अब समस्या बन रही है। वर्ष 1960–61 में जहाँ नाइट्रोजन उर्वरकों के तौर पर यूरिया का प्रयोग केवल 10 प्रतिशत था वह आज बढ़कर 80 प्रतिशत से ज्यादा हो गया है। खेत में डालने के बाद यूरिया जब विघटित होता है तो यह नाइट्रसआक्साइड, नाइट्रेट, अमोनिया और अन्य तत्वों में बदल जाता है, नाइट्रेट ऑक्साइड हवा में घुल कर स्वास्थ्य के लिए खतरा बन जाती है। इससे साँस की गम्भीर बीमारी हो सकती है। यह गैस वातावरण के तापमान में भी काफी तेजी से बढ़ोतरी करती है यह कार्बन डाइऑक्साइड ($CO_2$) की अपेक्षा तापमान में 300 गुना तक बढ़ोत्तरी करती है।

जमीन में नाइट्रेट व अमोनिया घुलने से भूजल प्रदूषित हो जाता है, साथ ही जमीन में मौजूद खेती के लिए लाभदायक वैक्टीरिया व अन्य सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता पर प्रतिकूल असर पड़ता है। इसके कारण पैदावार में गिरावट के साथ–साथ उत्पादन लागत में भी बढ़ोतरी हो जाती है इसके अलावा जमीन व भूमिगत जल की गुणवत्ता भी खराब होती जा रही है। इसके सााथ ही वायुमण्डल में नाइट्रस आक्साइड की मात्रा काफी बढ गयी है। हरियाणा में यह करीब 99.5 मिग्रा प्रति लिटर पर पहुँच गयी है जबकि 'विश्व स्वास्थ्य संगठन' के मानकों के अनुसार इसकी मात्रा 50 मिग्रा प्रति लिटर से ज्यादा नहीं होना चाहिए। पानी में इसकी मात्रा का ज्यादा होना सेहत के लिए हानिकारक है। इस समस्या के समाधान हेतु देश में शत–प्रतिशत नीम लेपित यूरिया के उत्पादन की शुरूआत की गई है। देश के अनेक कृषि क्षेत्रों में पौधों के लिए तीन मुख्य पोषक तत्वों– नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश का प्रयोग एक अनिनिश्त अनुपात में किया जा रहा है। किन्हीं –किन्हीं क्षेत्रों में तो यह अनुपात 9:2:1 है जब कि अनाज वाली फसलों में नाइट्रोजन, फोस्फेट व पोटाश का आदर्श अनुपात 4: 2 : 1, दाल वाली फसलों में 1 : 2 : 1 तथा सब्जी वाली फसलों में यह आदर्श अनुपात 2 : 1 : 1 होना चाहिए।

इसके अलावा खेती में कृषि रसायनों के बढ़ते प्रयोग के कारण किसानों के

अनेक मित्र कीट, जैसे–मधुमक्खी, तितली, और भँवरे इत्यादि जो परागण में मद्द करते हैं, भी बुरी तरह से प्रभावित हो रहे हैं। हाल में अमरीका के बागान मालिकों ने चिंता जताई थी कि उनके लगाये गये लाखों एकड़ बादामों के बाग घाटे का सौदा साबित हो रहे हैं उनमें फूल तो आते हैं। परन्तु फलों का निर्माण नही हो पाता है। अनेक अनुसंधानों में पाया गया कि बादाम के फूलों का परागण केवल मधुमक्खियों के बल पर होता है। अलग–अलग कारणों से पिछले कई वर्षो में वहाँ मधुमक्खियों की संख्या घटकर बहुत कम कर रह गयी। इसी प्रकार देश के अनेक भागों में खेती बाड़ी में कीटनाशकों के बढ़ते प्रयोग के कारण लोगों में अनेक बीमारियाँ पनप रही है।

❍❍❍

# राष्ट्रीय मिलेट वर्ष- 2018

❑ डॉ0 राजेन्द्र बहादुर श्रीवास्तव

सरकार ने वर्ष 2018 को **'राष्ट्रीय मिलेट वर्ष'** के रुप में मनाया। बदलते परिवेश में बेहतर स्वास्थ्य व संसाधन संरक्षण हेतु मोटे धान्य/अनाजों की खेती पर जोर दिया जा रहा है मोटे अनाज स्वास्थ्यवर्धक ही नहीं बल्कि पर्यावरण को भी बेहतर बनाए रखने में मदद करते हैं। हमारे देश में मक्का, ज्वार, बाजरा, रागी, साँवाँ, काकुन, कुटकी, कोदों और मंडवा जैसे कई मोटे अनाजों की खेती की जाती है। ये मोटे अनाज आयरन, जिंक कॉपर व प्रोटीन जैसे पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। मोटे अनाजों की फसलों की विशेषता है कि वे कम पानी वाली जमीन में भी आसानी से उगायी जा सकती हैं जब कि खाद्य व पोषण सुरक्षा देने के साथ–साथ पशुओं के लिए हरा चारा भी उपलब्ध कराती हैं। मोटे अनाजों की खेती के लिए यूरिया व अन्य कृषि रसायनों की कोई खास जरूरत नहीं होती है। इस कारण ये पर्यावरण के लिए ज्यादा बेहतर होती हैं। मोटें अनाजों की खेती से न केवल खाद्य व पोषण सुरक्षा सुनिश्चित होगी, बल्कि इससे विविधापूर्ण खेती को भी बढ़ावा मिलेगा, जिससे मिट्‌टी की उर्वरता में भी वृद्धि होगी साथ ही विषैले कीटनाशकों व रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल में कमी आयेगी।

**परम्परागत कृषि विकास योजना–**

हाल ही में जैविक खेती को बढ़ावा देने और कृषि रसायनों पर निर्भरता को कम करने के लिए **'परम्परागत कृषि विकास योजना'** की शुरूआत की गई है इससे न केवल उच्च गुणवत्तायुक्त, स्वास्थ्यवर्धक एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थों की उपलब्धता बढ़ेगी, बल्कि खेती में उत्पादन लागत कम करने में भी मदद मिलेगी। साथ ही मृदा–उर्वरता में सुधार के साथ–साथ किसानों की आमदनी में भी इजाफा होगा। जैविक खेती में तैयार फसल  उत्पाद सेहत के लिए काफी उपयोगी है। सरकार यह भी कोशिश कर रही है कि किसान खेती में यूरिया व अन्य कीटनाशिकों का बड़े पैमाने पर प्रयोग न करें। इस सम्बन्ध में फसलोत्पादन में लागत कम करने और उपज बढ़ाने में जैविक खेती की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। इसके अलावा जैविक खेती प्राकृतिक संसाधनों मुख्यतः मृदा, जल और वतावरण की मात्रा और गुणवत्ता में सुधार के साथ –साथ उनके संरक्षण में भी उपयोगी सिद्ध हुई है, जिसकी सीख देश के पूर्वोत्तर

जैविक खेती राज्य सिक्किम से लेनी होगी।

## आधुनिक खेती की मूलभूत आवश्यकताएँ

1– खाद्य सुरक्षा 2–पोषण सुरक्षा 3– मृदा सुरक्षा 4–आजीविका सुरक्षा

## मृदा उर्वरता बढ़ाने में दलहनी फसलों का प्रयोग–

'वर्ष 2016 दलहन वर्ष आईपीटीआईसी दुबई द्वारा घोषित किया गया। उचित फसल चक्र अपनाकर भी मृदा का उपजाऊपन बढ़ाया जा सकता है। फसल चक्र में खाद्यान्न फसलों के साथ दलहनी फसलों को भी उगाना चाहिए। खरीफ में मूँग, उर्द, लोबिया, सनई, ढैंचा आदि उगाएं। ज्वार, बाजरा व मक्का के बाद रबी में चना, मसूर व बरसीम लगाएं। दाल वाली फसलों की जड़ों में राइजोबियम जीवाणु की गाठें होती हैं, जो वायुमण्डल में उपस्थित 78.4ः स्वतंत्र नत्रजन (छ) में से 20–25 किग्रा नत्रजन प्रति हेक्टेअर संचित कर लेती हैं अर्थात दलहनें नाइट्रोजन स्थिरीकरण का काम करती हैं।

## बागवानी फसलों की जैविक खेती

आजकल सब्जियों की जैविक खेती का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। जैविक खेती में सब्जियों को जैविक खादों के सहारे व बिना कीटनाशिकों के पैदा किया जाता है, इस प्रकार की सब्जियों के दाम निश्चित रूप से रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशक दवाओं का प्रयोग करके उगायी गयी सब्जियों की अपेक्षा अधिक रहते हैं। आज उपभोक्ता अपने स्वास्थ्य की चिंता करते हुए अच्छे गुणों वाली सुरक्षित सब्जियों को ऊँचे दाम पर खरीदना पसन्द करता है। जैविक सब्जी उत्पादन का क्षेत्र बड़ी तेजी से आगे बढ़ रहा है, ग्रामीण क्षेत्रों में ऑर्गेनिक फार्मिंग को बढ़ावा देने के लिए 'नाबार्ड' सहित कई सरकारी व गैर सरकारी संस्थान कार्यरत हैं। बदलते परिवेश में वैश्विक स्तर पर ऑर्गेनिक खाद्य पदार्थों की निरन्तर बढ़ती माँग के कारण बागवानी फसलों की जैविक खेती को बढ़ावा देना नितान्त आवश्यक है। सब्जी उत्पादन हेतु जहाँ तक हो सके जैविक खादों का प्रयोग करना चाहिए जिससे फसल उत्पादों की गुणवत्ता व स्वाद बना रहे।

नीम/जिंक/सल्फर लेपित यूरिया का विकास–

भारत में 'नीम वर्ष 2005' मनाया गया , क्योंकि अमरीकी वैज्ञानिक 'डब्ल्यू. आर. ग्रेस के वर्ष 1995 के नीम पेटेन्ट का रोम–इटली की अदालत ने खारिज

कर, भारत को अधिकार दिया, क्योंकि नीम भारत की उत्पत्ति है। नीम/जिंक/सल्फर लेपित यूरिया का प्रयोग करने से न केवल उपज में बढ़ोतरी होती है, बल्कि यूरिया पर होने वाले खर्च में भी कमी की जा सकती है। इसके इस्तेमाल से कीटनाशकों पर होने वाले खर्च में भी कमी की जा सकती है, क्योंकि नीम एक प्राकृतिक कीटनाशक है। नीम/जिंक/सल्फर लेपित यूरिया का प्रयोग बढ़ने से यूरिया में उपस्थित नाइट्रोजन का मृदा में लीचिंग व डिनाइट्रीफिकेशन की क्रिया को कम करता है। इसके अलावा गंधक और जिंक युक्त यूरिया का प्रयोग करके नाइट्रोजन उपयोग दक्षता को भी बढ़ाया जा सकता है। वर्तमान में 'नीम' लेपित यूरिया सभी राज्यों में सरकारों द्वारा उपलब्ध है, जो पूर्व में मात्र समुद्री इलाकों/राज्यों–प0 बंगाल, ओडिशा, तामिलनाडु, केरल, कर्नाटक आदि में ही उपलब्ध होता था।

**एकीकृत फसल प्रणाली मॉडल का विकास–**

खेती में लगातार एक ही प्रकार की फसलें उगाने व एक ही तरह के आदानों का प्रयोग करने से न केवल फसलों की पैदावार में कमी आयी है, बल्कि उनकी गुणवत्ता में भी गिरावट दर्ज की गई। एक फसल प्रणाली न तो आर्थिक दृष्टि से लाभदायक है और न ही परिस्थितिक दृष्टि से अधिक उपयोगी है। अतः फार्म पर धान्य फसलों के साथ दलहन फसलें, बागवानी फसले, पशुपालन, मछलीपालन व मधुमक्खी–पालन को भी अपनाना चाहिए। जिससे यदि किसी वर्ष मुख्य फसल नष्ट हो जाये, तो अन्य कृषि व्यवसाय किसानों की आमदनी का स्रोत बन जाते हैं। साथ ही फसल विविधीकरण में प्राकृतिक संसाधनों का भी उचित उपयोग होता है।

**फसल चक्र में बदलाव**

बेहतर पर्यावरण व संसाधन संरक्षण हेतु आजकल उत्तर –पश्चिम भारत में' धान–गेहूँ फसल चक्र के स्थान पर 'बेबीकॉर्न, मक्का–अगेती आलू –पछेती गेहूँ –मूँग, लोबिया, आलू, ग्रीष्मकालीन मक्का, मक्का–गेहूँ–मूंग व बेबीकार्न–अगेती सरसों पछेती गेहूँ–मूंग फसल चक्र किसानों के बीच काफी लोकप्रिय हो रहे हैं। इन फसल चक्रों के अन्तर्गत किसानों को वर्ष भर आमदनी मिलती रहती है। इसके अलावा उनकी घरेलू आवश्यकताओं जैसे–अनाज, दलहन, तिलहन और चारा की भी पूर्ति होती रहती है। इस क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास (ण्ध्ैत्एण्ड।त्), मोदीपुरम, मेरठ (उ.प्र.) कार्यरत हैं।

**फसल अवशेष प्रबन्धन–**

फसल अवशेषों का प्रयोग जैविक खेती में करके मृदा में ऑर्गेनिक/जीवांश कार्बन की मात्रा में सुधार किया जा सकता है। इसी प्रकार सब्जियों के फल तोड़ने के बाद इनके तने पत्तियाँ और जड़े खेत में रह जाती हैं जिसकी जुताई करके मृदा में दबाने से खेत की उर्वरता में सुधार होता है। फसल अवशेष पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने के साथ–साथ मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक क्रियाओं पर भी अनुकूल प्रभाव डालते हैं। फसल अवशेष क्षारीय मृदाओं के पीएच मान को कम करके उन्हें खेती योग्य बनाने में भी मदद करते हैं। फसल अवशेष जलाने पर 'एनजीटी' (छळज) द्वारा दण्ड दिया जाता है, जिसमें 2 एकड़ से कम क्षेत्र पर रू0 2500, 2 से 5 एकड़ तक पर रू0 5000 तथा 5 से अधिक क्षेत्र पर रू0 15000 का दण्ड है।

**फर्टिगेशन–**

यह शब्द उर्वरक और सिंचाई दो शब्दों से मिलकर बना है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली में जल के साथ–साथ उर्वरकों को भी पौधों तक पहुँचाना फर्टीगेशन कहलाता है। इससे उर्वरक उपयोग दक्षता बढ़ने के साथ–साथ पौधों को आवश्यकतानुसार पोषक तत्व मिल जाते हैं। साथ ही मँहगे उर्वरकों का अपव्यय भी कम होता है। इस विधि से जल और उर्वरक पौधों के मध्य पहुँचकर सीधे पौधों की जड़ों तक पहुँचते हैं। इसलिए फसल में खरपतवार भी कम पनपते हैं। भारत सरकार ने 'जल संरक्षण वर्ष 2013 घोषित किया, उसके बाद से सरकार द्वारा ड्रिप सिंचाई एवं फुब्बारी सिंचाई पर जोर दिया जा रहा है, जिससे जल बचत, खर्च कम होता है।

**कीट/व्याधि नियनत्रण–**

प्रकृति में पाए जाने वाले विभिन्न मित्रों कीट जैसे परजीवी, परभक्षी एवं कीड़ों में बीमारी फैलाने वाले जीवाणुओं को कीट/व्याधि नियन्त्रण हेतु प्रयोग करना चाहिए।

**'ट्राइकोग्रामा'–**

एक सूक्ष्म अंड परजीवी है, जो तनाछेदक, फलीछेदक, पत्ती खाने वाले कीटों के अंडो पर आक्रमण करते हैं। इसी प्रकार **'ट्राइकोडरमा'** नामक फफूँद को भूमि द्वारा उत्पन्न रोगों में नियन्त्रण के काम लेते हैं। इसको जड़ गलन

उकठा व नर्सरी में पौधों का सड़ना इत्यादि रोगों के विरूद्ध प्रयोग करते हैं। बीजोपचार के लिए 6 से 8 ग्राम चूर्ण प्रति किग्रा बीज व भूमि उपचार के लिए 2 से 3 किग्रा चूर्ण प्रति हे0 की दर से गोबर व वर्मीकम्पोस्ट में मिलाकर भूमि में डालने से विभिन्न मृदा जनित रोगों की रोकथाम की जा सकती है। इससे कृषि रसायनों के प्रतिकूल प्रभावों से भूमि को बचाया जा सकता है।

**एकीकृत पोषण प्रबंधन–**

टिकाऊ फसल उत्पादन हेतु 'एकीकृत पोषण प्रबंधन' के अन्तर्गत रासायनिक उर्वरकों के साथ पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने वाले अन्य सभी स्रोतों का प्रयोग किया जाता है इन स्रोतों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट, खाद, हरी खाद, मुर्गी खाद, वर्मी कम्पोस्ट, फसल अवशेष प्रबंध और जैविक उर्वरक प्रमुख हैं। ये सभी स्रोत पर्यावरण हितैषी और इनसे मुख्य पोषक तत्वों के अलावा सूक्ष्म पोषक तत्व भी पौधों को धीरे–धीरे व लम्बे समय तक उपलब्ध होते रहते हैं।

**पूसा 'एसटीएफआर' मीटर का विकास–**

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा पूसा'सॉयल टेस्ट फर्टिलाइजर रिकमेंडेशन मीटर नामक क्षेत्र विकसित किया गया है। इसके द्वारा मृदा के गुणों जैसे मृदा पीएच, विद्युत चालकता, कार्बनिक कार्बन, मृदा में उपलब्ध फॉस्फोरस एवं पौटाश का निर्धारण किया जा सकता है। यह मृदा परीक्षण के साथ–साथ फसलों के लिए उर्वरकों की संस्तुति भी दर्शाता है। साथ ही इसका प्रयोग व कार्यविधि भी सरल व सुगम है। इसके प्रयोग के लिए केवल 2–3 दिन का प्रशिक्षण लेने के बाद 'युवा किसान' स्वयं ही मृदा परीक्षण कर सकते हैं। जहाँ अन्य मृदा परीक्षण किट मृदा गुणों की जानकारी केवल रंगों की गुणात्मक तुलना के आधार पर देते हैं वहीं इस कलरीमीटर आधारित यन्त्र से मृदा परीक्षण का सही–सही मात्रात्मक निर्धारण होता है। यह उन सभी क्षेत्रों के लिए अत्यधिक हैं जहाँ मृदा परीक्षण की सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। ग्राम पंचायतें, सहकारी समितियाँ, किसान सेवा केन्द्र तथा गाँवों में कार्यरत् स्वयं सहायता समूह (SHG) इसका उपयोग करके अपनी सेवाओं की गुणवत्ता में वृद्धि कर सकते हैं। इसके अलावा ग्रामीण शिक्षित बेरोजगार युवक/युवतियाँ इस उपकरण का उपयोग करके मिट्टी परीक्षण का व्यवसाय शुरू कर सकते हैं।

**सारांश–**

आये दिन खाद्य पदार्थो में कीटनाशिकों, व्याधिनाशिकों, रासायनिक उर्वरकों और पादप नियामकों के अवशेष मौजूद होने की रिपोर्ट सामने आती रहती हैं। देश के अनेक कृषि क्षेत्रों जैसे पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और हरियाणा आदि में एक ही किस्म के रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक और अन्धाधुन्ध प्रयोग के परिणामस्वरुप उपजाऊ भूमि का बहुत बड़ा हिस्सा तेजी से लवणीय, अम्लीय और क्षारीय भूमि में तब्दील होता जा रहा है। रासायनिक उर्वरकों का असंतुलित प्रयोग मृदा की उर्वरा शक्ति और उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है और अन्ततः किसान की आमदनी भी कम हो जाती है। इसके अलावा बढ़ता असंतुलित उर्वरक उपयोग जल, वायु और मृदा प्रदूषण को भी बढ़ाता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि फसल उत्पादन में उर्वरकों का संतुलित उपयोग किया जाए और पोषक तत्व प्रबंधन में रासायनिक उर्वरकों के अतिरिक्त कार्बनिक खादों का भी समन्वित (50 : 50 अनुपात में) उपयोग किया जाए तभी हम 'टिकाऊ खेती' की नींव 21वीं सदीं में रख सकते हैं जिसके साथ ही हम अपनी और भावी पीढियों की खाद्य, चारा, ईंधन, कपड़ा व अन्य आवश्कताओं को पूरा कर सकेंगे।

❍❍❍

# सेवा का सबसे बड़ा अन्तर्राष्ट्रीय संगठन : स्काउटिंग

❑ **दयाशंकर**
राष्ट्रपति पुरस्कृत

स्काउटिंग जीवन की अविरल धाराओं के मध्य बहती एक ऐसी नौका है, जिसमें बैठकर प्रत्येक स्काउट गाइड अपने को मनोवैज्ञानिक वातावरण में पाकर आनन्द विभोर होकर तैरता रहता है। उसका अचेतन मन स्काउटिंग को स्वीकार कर लेता है क्योंकि स्काउटिंग उसकी जिज्ञासाओं का साधक, उसके प्रश्नों का सही उत्तर तथा उसकी पूर्ति का एक सशक्त साधन बन जाता है। प्रत्येक व्यक्ति का मन जंगलो में घूमने का, पहाड़ों पर चढ़ने का, नदियों में तैरने का, हवा में उड़ने का, पशु–पक्षियों को स्नेह करने का व दुलारने का, प्रकृति से प्रेम करने का, जरुरत मंद लोगों की सहायता करने का, नव निर्माण करने का होता है और यह संस्था इन सभी अवसरों को प्रदान करती है। स्काउटिंग प्यार व स्नेह का एक ऐसा अटूट बन्धन है जो इसके बन्धन में एक बार बंधा वह सदैव के लिए बंध जाता है तभी तो लार्ड वेडेन पावेल जिन्होंने 1907 में स्काउट आंदोलन की आधार शिला रखी थी तभी उन्होंने कहा Once a Scout, always a Scout.

समय परिवर्तनशील है। समय–परिवर्तन के साथ मनुष्य की क्रिया–कलाप उसकी आर्थिक क्रियाओं और रहन–सहन के स्तर में भी परिवर्तन होता है। इसी का नाम भौतिक परिवर्तन है। परिवर्तन से अनुकूलन करने के लिए मनुष्य को संघर्ष करना पड़ता है। और यही अशांति का आधार बन जाता हैं। मनुष्य स्वभाव से शान्तिप्रिय प्राणी है। उसे सदैव से ही अशान्त वातावरण से कष्ट होता चला आया है। इसी कारण से वह संसार रुपी रंग मंच पर शान्ति का अभिनय देखना चाहता है। किन्तु जैसे–जैसे वह विकास के सोपान पर चढ़ता है वैसे वैसे जीवन संघर्षमय बनता जाता है।

आज का बदलता युग मानव और मानवता दोनों को अनेक चुनौतियाँ दे रहा है, अनुशासन हीनता गरीबी, पिछड़ापन, प्राकृतिक साधनों का दुरूप्रयोग मरूस्थल को हरा भरा करना, गरजते समुद्र सुनामी बाढ़, उड़ते वायुयान राकेट और प्रदूषण की समस्या हमारे सामने है इनकी चुनौतियों का सामना करने के लिये स्काउट गाइड आन्दोलन अपने विभिन्न शाखाओं, अंगों से समाज को एक नई दिशा देने में तत्पर हैं छोटे बालकों बालिकाओं से लेकर वृद्धावस्था तक के

लिए स्काउटिंग एवं गाइडिंग है। सामान्य आयु के बालक अथवा बालिकाएं सामान्य आयु की संगत को अधिक प्रसन्द करते हैं। एक साथ रहने, काम करने अपनी प्रतिभा का विकास करने और संगठित होकर कार्य करने की प्रेरणा एक ही मंच पर स्काउटिंग गाइडिंग संस्था सहजता से देती है।

बच्चों की मूल प्रवृत्ति फन, फाइट और फूड के सहारे स्काउटिंग इन में देश, राज्य, समाज के साथ परिवार और स्वयं एक अच्छा और सुयोग्य नागरिक बनने की प्रेरणा देती है। अन्ध विश्वासों से ओत–प्रोत इस अगम–निगम संसार में चिकित्सक, इंजीनियर, अधिवक्ता, आई.ए.एस, पत्रकार और कई प्रशासनिक ओहदों पर कार्य करने को तैयार हैं किन्तु इसके विपरीत एक अच्छा नागरिक बनना शायद बहुत कठिन है। पद लिप्सा की भेंट से जहाँ पद के दुरूपयोग की संभावनाएं बढ़ जाती हैं वहीं इसकी सार्थकता पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है। इन मूल प्रवृत्ति से इतर स्काउट बच्चों के नेतृत्व की क्षमता, कर्तव्य परायणता, अनुशासन स्वालम्बन, साहस ही नहीं बल्कि विपरीत परिस्थितियों में भी स्वयं के साथ मि़त्रों की रक्षा करने की सीख सहजता से देती है।

प्रायः देखा जाता है कि घर में शान्त और सरल सा दिखने वाला बालक स्काउटिंग, रेडक्रास और खेल में अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाता है। तब अचम्भित हो वही अभिभावक सोचने मे मजबूर होता है कि उसकी यह प्रतिभा कहाँ थी? या कहें कि स्काउटिंग गाइडिंग तो संसार में कुम्हार का काम करती है जो मिट्टी को साँचें में ढाल पर एक मूल्यवान मूर्ति का रुप देती है। स्काउटिंग के शब्दों में यही चरित्र निर्माण की संज्ञा में आता है। स्काउटिंग के चरणों की विभिन्नता को परे रखकर यदि देखें तो ज्ञात होगा कि स्काउटिंग का मूल उद्‌देश्य बालकों को मनोवज्ञानिक ढंग से सुदृढ़ करना है इसके द्वारा बालक का चुतुष्पदीय निर्माण, शैक्षिक निर्माण स्वास्थ्य निर्माण, सामाजिक निर्माण, चरित्र निर्माण होता है। मनुष्य का चरित्र उसकी विभिन्न प्रवृत्तियों की समष्टि है। उसके मन के समस्त झुकावों का योग है। सुख और दुःख ज्यों ज्यों उसकी आत्मा पर से होकर गुजरते हैं, वे सब उस पर अपनी छाप छोड़ते जाते हैं और इन सब विभिन्न छापों की समष्टि ही मनुष्य का चरित्र कहलाता है। हम वही हैं, जो हमारे विचारों ने हमें बनाया है, हमारी आदतों ने हमें बनाया है, प्रत्येक विचार एक आदत के रुप में हमारे शरीर पर उसी प्रकार प्रकरित होती है, जैसे एक लोहे के टुकड़े पर हथौड़ी की हल्की चोट, उसको एक आकार देती चली जाती है। जब कि विचार सजीव होते हैं। उनकी दौड़ बहुत दूर तक होती है।

भलाई और बुराई दोनों का चरित्र गठन में समान भाग रहता है। और कभी–कभी तो सुख की अपेक्षा दुख ज्यादा प्रभावशाली शिक्षक के रुप में कार्य करता है। विलास और ऐश्वर्य की गोद में पलते हुए, गुलाबों की शैया पर सोते हुए भी कभी आंसू बहाए बिना कौन महान हुआ है?

मन को यदि झील की उपमा दी जाए, तो उसमें उठने वाली प्रत्येक लहर जब दबती है तो वह पूर्णतया नष्ट न होकर एक प्रकार का चिन्ह अन्तःकरण में छोड़ जाती है। और ऐसी सम्भावना का निर्माण कर जाती है जिससे कि वह लहर दुबारा उठ सके। हमारा प्रत्येक कार्य, हमारा प्रत्येक अंग–संचालन, हमारा प्रत्येक विचार हमारी आदतों के रुप में परिलक्षित होता है। यदि शुभ विचारों का प्राबल्य हो तो आदतें अच्छे रुप में परिलक्षित होती है। स्काउटिंग चरित्र निर्माण का प्रमाणिक प्रशिक्षण और एक तरह की विधा है जो बालकों और युवाओं के लाभ के लिये है। चारित्रिक विकास एवं स्वास्थ्य की अच्छी आदतें, कम में रहना सीखना, मिलबाँट कर खाना, कार्य करना अर्थात समूह के (सीमित) साथ समाज से जुड़कर रहना क्यों कि आज प्रत्येक मनुष्य समाज से कटता जा रहा है। कोई किसी से मतलब नहीं रखना चाहता।

ऐसे में एक स्काउट/गाइड संस्था अपने प्रशिक्षणों के माध्यम से ये बोध कराती है कि समाज हमारे लिये कितना उपयोगी है। स्काउटिंग के जन्मदाता विश्वचीफ स्काउट लार्ड वेडेन पावेल आफ गिंलबिल ने लिखा है कि मैं उस आदमी को सबसे बुरा समझता हूँ जो अपने हुनर को मरते दम तक किसी को नहीं बताता। यह वाक्य साधारण सा लगता है किन्तु इसके भाव सार गर्भित हैं। हुनर का विकास करने का प्रत्येक अवसर इस सस्था में मिलता है। एक साथ कार्य करने की प्रवृत्ति, टोली विधि और दिन भर थक जाने के बाद रात्रि में संस्कृतिक कार्यक्रमों का 'कैम्प फायर' के रुप में आनन्द लेना शामिल है। स्काउटिंग में होने वाली सर्व धर्म प्रार्थना ह्रदय को छू जाती है। जहाँ आजकल धर्मो की आड़ में युद्ध हो रहे हैं वही एकमंच पर स्काउटिंग हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, जैन, फारसी सहित सभी धर्मो की प्रार्थना कराकर देश प्रेम ही नहीं धर्म प्रेम की भी भावना पैदा करती है। स्काउटिंग और गाइडिंग के शब्द स्काउट गाइड की अक्षर व्याख्या करने पर स्वतः ही स्काउट गाइड का स्वरूप सामने आ जाता है।

**मो0नं0– 9889208129**

○○○

# मीराबेन-एक विलक्षण व्यक्तित्व

❑ **सौजन्य : युग निर्माण योजना**

मीराबेन का जीवन इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि यदि मनुष्य में दृढ़ संकल्प हो तो वह साधारण परिस्थितियों में रहता हुआ भी अपने में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकता है। जिसकी आत्मा ऊपर उठने के लिए, आगे बढ़ने के लिए बेचैन होती है, संयोग से उसे मार्गदर्शन भी अच्छा मिल जाता है। आवश्यकता है–सब सुख–सुविधाओं को त्यागकर लक्ष्य की ओर बढ़ने की ।

जिन दिनों प्रथम विश्वयुद्ध चल रहा था, इंग्लैंड की एक महिला मेडलीन स्लेड ने फ्रेंच लेखक रोम्या रोलां का उपन्यास 'जों क्रिस्तोफ' पढ़ा इस उपन्यास के नायक जो क्रिस्तोफ जैसी बेचैनी वह अपने अंतर में अनुभव करने लगीं। फिर इसी लेखक की दूसरी पुस्तक 'बीथोवन का जीवनचरित' पढ़ने को मिली। इन दोनों पुस्तकों के अध्ययन से स्लेड लेखक के विचारों से बड़ी प्रभावित हुईं। उन्होंने रोम्या रोलां को एक पत्र लिखा, पर उस समय कठिनाई यह थी कि स्लेड फ्रेंच भाषा नहीं जानती थीं। और रोम्या रोलां अँगरेजी नहीं जानते थे। फिर भी प्रथम पत्र पढ़कर रोम्या रोलां ने उन्हें स्विटजरलैंड आने के लिए निमंत्रण दे दिया। रोम्या रोलां उस समय स्विट्जरलैंड के विलेन्यूक नगर में रहते थे। स्लेड ने सोचा कि रोम्या रोलां से मिलते समय एक दुभाषिये की आवश्यकता होगी। अतः क्यों न जाने से पूर्व फ्रेंच भाषा का इतना अभ्यास कर लिया जाए कि रोम्या रोलां से बात करने में कठिनाई न हो और स्लेड ने अपनी यात्रा तब तक स्थगित रखी, जब तक फ्रेंच भाषा में विचार–विनिमय योग्य न हो गईं।

बातचीत के बीच रोम्या रोलां ने गांधी जी से संबंधित अपनी नवीन कृति के संबंध में बताया और महात्मा गांधी के प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हुए 'दूसरे ईसा' कहा। स्लेड ने पेरिस लौटकर सबसे पहला काम यह किया कि प्रकाशक से उस पुस्तक की एक प्रति खरीदकर पूरी पढ़ ली। पिछले वर्षों से स्लेड जिस वस्तु की तलाश कर रही थी, वह उस पुस्तक में पढ़ने को मिल गई। अब उनकी आंतरिक खोज को एक दिशा मिल गई। उन्हें ऐसा लगा, जैसे आश्रम–जीवन उन्हें आमंत्रित कर रहा है। जिस लक्ष्य के निर्धारण हेतु वह गत वर्षों से भटक रही थीं, वह बिना किसी तर्क–वितर्क के निश्चय हो गया। घर लौटकर उन्होंने आश्रम–जीवन की तैयारी भी कर ली। धीरे–धीरे मांसाहार छोड़ दिया। श्रम के प्रति आस्था बढ़ने लगी, भूमि पर सोना शुरु किया। उन्होंने किसी से सुन रखा

था कि भारत की मातृ–भाषा उर्दू है अतः उर्दू पढ़ना शुरु किया। बाद को हिंदी सीखकर गीता और वेदों का अध्ययन भी शुरु कर दिया।

स्लेड ने गांधी जी को श्रद्धा से परिपूर्ण एक पत्र लिखा, साथ में अपने द्वारा काते ऊन के कुछ नमूने तथा हीरे की अँगूठी बेचकर धनराशि भेंट स्वरुप प्रेषित की। गांधी जी का सीधा–सादा उत्तर था–संकल्प दृढ़ हो तो भारत आ जाओ। 'भारत की यात्रा शुरु करने से पूर्व परिवार के सदस्यों ने भी समझाया, पर वे जो कुछ निश्चय कर चुकी थीं वह अंतिम था। इस बार माता–पिता ने उन्हें विदा किया तो दोबारा भेंट न हो सकी।

इससे पूर्व सन् 1907 में अपने पिता के साथ दो वर्ष के लिए स्लेड भारत आ चुकी थीं। उस समय स्लेड की आयु केवल 15 वर्ष थी। किशोरावस्था की कल्पनानुसार भारत एक रहस्यमय, खतरनाक, काले लोगों, साँपों, चीतों, हाथियों और प्लेग जैसे रोगों का देश था। स्लेड के पिता जी उस समय दो वर्ष के लिए भारत आए थे। स्लेड को भारत में उनकी कल्पना के विपरीत चित्र दिखाई दिया। भारत के वास्तविक जीवन से वे अंत तक वंचित ही रहीं। सामान्य भारतीयों से कोई संपर्क न हो पाया। जो उनके सेवक थे। उन्हीं से पहचान हो पाई थी। राजभवनों की डिनर पार्टियों तथा टेनिस के क्रीड़ांगनों के बीच ही उनका काफी समय निकल गया।

स्लेड जब दो वर्ष बाद इंग्लैंड वापस गई तो उनकी बेचैनी और बढ़ने लगी। यहाँ आकर उन्हें थोड़े दिन तक केवल औपचारिक पार्टियों तथा सामाजिक उत्सवों का स्मरण रहा। इसके बाद तो अध्ययन, संगीत और घुड़सवारी में मन लगने लगा, पर रहस्यमय खोज अभी भी अधूरी थी। 22 नवंबर, 1892 को इंग्लैंड के एक उच्च अधिकारी के परिवार में जन्म लेने वाली यह बालिका बचपन से ही अद्भुत स्वभाव की थी। पारिवारिक स्नेह और सुखी जीवन के लिए सुविधाओं की किसी प्रकार कमी न थी, फिर भी खिलौनों का खेल उसे बिलकुल प्रसंद न था। पशुओं और पक्षियों से प्यार था। कभी–कभी तो अकेले में उनसे बातें भी करती थीं। अकेले में कभी भयभीत होती, तो कभी आनंदित। ऊपर से पढ़ाई तथा सामान्य कार्य करते हुए भी अंतर किसी अज्ञात की खोज में भी उलझा रहता था। सामान्य शिक्षा के अतिरिक्त चित्रकला, वास्तुकला और मूर्तिकला का भी काफी ज्ञान था। स्लेड को अपनी मानसिक खोज के ही कारण भारत की तीर्थयात्रा करनी पड़ी।

भारत आकर स्लेड इलाहाबाद पहुँची, गांधी जी उन दिनों वहीं थे। सामने

पहुँचकर घुटनों तक झुककर स्लेड ने प्रणाम किया। गांधी जी ने अपने हाथ से उठाते हुए कहा– ''आज से तुम मेरी पुत्री हुईं।'' फिर क्या पिता ने अपनी पुत्री का 'मीरा' नामकरण किया? गांधी जी ने मीरा को सबसे पहले आश्रम में शौचालय की सफाई का काम दिया। मीरा को इस कार्य पर संतोष हुआ। उन्होंने सोचा कि आखिर मुझे किसी कार्य के योग्य समझा गया। सहस्त्रों मील की यात्रा पूर्ण करके आने वाली मीरा गांधी जी के प्रथम आदेश से विचलित नहीं हुईं। उन्होंने कर्म को पूजा पहले ही माना था और एक वर्ष के आश्रम– जीवन का अभ्यास इंग्लैंड में ही किया था।

जलवायु अनुकूल न थी। दिनचर्या भी अजीव ढंग की, जिसकी आशा शायद मीरा को कभी न रही होगी। नित्य कपास छाँटती तथा हिंदी पढ़ने व प्रार्थना करने का अभ्यास करतीं।अपने बाल कटवा दिए और खादी की साड़ी पहनकर आश्रम में ही आजन्म अविवाहित रहने का संकल्प कर लिया। गांधी जी की सहृदयता तथा आश्रमनिवासियों की सहयोग वृत्ति ने मीरा को वहाँ के वातावरण में घुला दिया। महात्मा गांधी की विचारधारा के प्रति जो श्रद्धा थी, उसके सम्मुख कोई भी आकर्षण न ठहर सका। अब तो मीरा सारी इच्छाओं का दमन कर सेवा को ही प्रमुख व्रत मानने लगी थीं। मीरा गांधी जी के निकट संपर्क में रहती थीं अतः उनकी प्रत्येक आवश्यकता का पूरा–पूरा ध्यान रखती थीं। आश्रम में कई बार अस्वस्थ होने पर मीरा अपने आत्मबल से ठीक हो गईं। स्वतंत्रता– संग्राम के आंदोलनों में गांधी जी के साथ मीराबेन भी जाती थीं। उस समय उन्हें ऐसा लगता मानो किसी गुरु के सहत्रों शिष्य मार्गदर्शन के लिए आतुर खड़े हैं। वे न कभी थकीं और न अपने लक्ष्य से विचलित हुईं। गोलमेज परिषद् में इंग्लैंड जाने पर उन्हें अवश्य अपने स्वच्छंद जीवन की याद आई और उन दिनों की तुलना भारत के अनुशासित जीवन से की, पर निराशा जैसी कोई बात नहीं थी। हाँ, विचलित होने की यही परिस्थितियाँ थीं। पर उनमें भी उन्होंने अपने को सँभाल लिया । यहाँ आकर रोम्या रोलां से भी वे न मिल सकीं, जिन्होंने जीवन की दिशा प्रदान की थी। परिषद् के अन्य सदस्य रोम्या रोलां से मिलने गए थे।

स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के कारण दो बार कारावास का दंड भुगतना पड़ा। दूसरी बार तो उन्होंने जेल में ही रहकर रामायण, महाभारत, और उपनिषदों का अध्ययन किया। गांधी जी के विचारधारा को फैलाने तथा उनकी विचारधारा के प्रति भ्रांति–निवारण हेतु उन्होंने इंग्लैंड तथा अमेरिका का दौरा किया। स्थान–स्थान पर व्याख्यानमालाएँ आयोजित की गईं। "वे अपार

जनसमूह के बीच गांधी जी के रामराज्य तथा अहिंसक विचारधारा पर प्रकाश डालतीं। जनता उनसे प्रभावित होती। मीराबेन जहाँ भी गईं, उन्होंने देखा, कि लोगों में ऊपरी व्यस्तता भले ही काफी हो, पर आंतरिक खोज के लिए भी व्यग्रता है। लंदन में लार्ड हेलीफाक्स, चर्चिल, जनरल स्मट्स तथा सर मेम्युअल होर जैसे विचारकों तथा राजनीतिज्ञों से भी मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने देखा कि चर्चिल गांधी जी के राजनीतिक विरोधी भले ही रहे हों, पर वे समाजसुधारक के रुप में सदैव उनकी प्रशंसा ही करते रहते थे। भारत लौटकर अधिकतर समय वर्धा में ही व्यतीत हुआ। अगस्त 1942 के 'भारत छोड़ो' आंदोलन में भाग लेने के कारण गिरफ्तार की गईं। यरवदा जेल में श्री महादेव देसाई और कस्तूरबा की मृत्यु के समय मीराबेन उनके पास ही थीं। जेल से छूटकर उन्होंने हरिद्वार के पास 'किसान आश्रम' की स्थापना की । अब उनका ध्यान ग्रामीण कल्याण कार्यों की ओर गया। ग्रामों के देश भारत में रहने वाले किसानों को उन्नत ढंग की खेती तथा पशुपालन के अच्छे तरीके बताने शुरु किए। काफी दिनों तक वहीं रहकर गांधी जी के मार्गदर्शन में कार्य करती रहीं। जब देश में घृणा और हिंसा का तांडवनृत्य हो रहा था, उस समय गांधी जी कुछ विरक्त अवश्य हो गए थे, पर तभी मीराबेन को महात्मा गांधी की हत्या का समाचार सुनने को मिला। उन्होंने गांधी जी के अंतिम दर्शन की इच्छा पर रोक लगाई और यह विश्वास किया कि मेरे मार्गदर्शक शरीर से भले ही न रहें हों, पर आत्मा तो उनकी कभी नष्ट नहीं हो सकती।

प्रत्येक स्थिति में अविचल रहना ही तो उन्होंने गांधी जी से सीखा था। फिर परीक्षा की इन घड़ियों से वे धैर्य कैसे खो सकती थीं? उन्हें गांधी जी का वह कथन ''ईश्वर पर भरोसा रखकर अपना कर्तव्य करते रहो।'' अच्छी तरह स्मरण था। गांधी जी के न रहने के बाद वे ग्रामीण कल्याण के कार्यों में लगी रहीं। मीराबेन यद्यपि इंग्लैंड में पैदा हुई, उनका शरीर भले ही विदेशी हो, पर भारतीय आत्मा का प्रकाश उनमें सदा झलकता रहा। विदेशी मन में भारतीय वेदांत की विचारधारा सदैव सक्रिय रही। भारत उनकी सेवा—भावना को कभी नहीं भूल सकता। मीराबेन ने गांधी जी के आदर्शों के प्रति अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया और सारा जीवन अनुशासित ढंग से उन्हीं के बताए निर्देशों पर चलाया। सचमुच भारतीयों के प्रति उनकी हितैषी भावना वंदनीय है।

**सौजन्यः युग निर्माण योजना**

○○○

Religion

# MEANING OF SPIRITUALITY

❑ **Suresh Chandra**
**Dehradun**

*"We are not physical beings having a spiritual experience, but spiritual beings having a physical experience."*

Spirituality lies beyond the material world of proof, beyond what can be measured or counted. It is made up of inner life, the realm of belief and mystery. Spiritual matters are those matters which are related to human kind's ultimate nature and purpose. These matters are concerned not only to material, biological organism but to the beings which have a unique relationship to that which is perceived to be beyond both time and the material world.

As such, the spirituality is contrasted with the material, the temporal and the worldly. The central defining characteristic of spirituality is its connection to a metaphysical reality, which may include an emotional experience of religious awe and reverence, or such states as sudden enlightenment or Nirvan. Spirituality perceives life as higher, more complex or more integrated than mere sensual life.

Some of life's most difficult questions are the spiritual ones. What is the purpose of life? Where does real meaning come from? What is of real value in our lives? If there truly is a God who loves us, how could there be so much suffering and unfairness in the world? Part of our addiction to the busyness of life is an attempt to prevent ourselves from thinking about our mortality, the inevitable fact of our own death. But when we keep ourselves too busy to consider the purpose or our existence our lives cease to have any meaning. The real fact is that when we fully accept the reality of our mortality, then we begin to live. This is the point at which we begin to enter into and learn about the spiritual dimension of our life.

**Spirituality and Religion-** It is important to differentiate spirituality from religion. Religion is a set of dogmas, beliefs,

rituals and worshipping some gods. Spirituality is realization; not doctrines or dogmas, rituals or books, temples or forms. Religion and spirituality are related and intertwined, but they are not the same. A person may experience spirituality without being a member of any specific religious affiliation, and even the most religious person may feel spiritually bereft.

Some people draw a line of distinction between 'spirituality in religion' and 'spirituality as opposed to religion'. The believers in 'spirituality in religion' follow a particular religion but have a faith more personal and less dogmatic. Despite their religious beliefs they are more open to new ideas and influences and do not follow the doctrines blindly. Their relation with the Deity is more personal than general.

Those who speak of 'spirituality as opposed to religion' do not follow a particular path. They believe in the existence of many ' spiritual paths' and refuse to indicate the best to follow, They emphasize the importance of finding one's own path rather than follow what others say.

Actually the true purpose of religion is to enhance spirituality through ritual and practice. This is accomplished when a person approaches his or her religion as a way to enter the great mystery and to become aware of the sacredness of all life. Religion can become a barrier to spirituality when it insists on narrow dogma and estranges its followers from a sense of connection with the Divine. Religion serves us best as a vehicle to nourish and develop our spirituality. It is possible, however to get too caught up in the vehicle, the religious practice, while losing sight of the destination, spirituality, which is communion with the Divine and compassion for all.

A distinction should be made between mere morality and ethics. Very often we identify spirituality with yogic healing, healthy dietary habits and moral preaching. But spirituality is much more than these things: it is about inner transformation. Maintaining a healthy body and observing good social behaviour

are not the aims of spiritual life., though they are necessary preliminary requirements. The goal is much higher than mere concerns about a healthy body and mind. Spirituality is about self-realization, the sacred relationship with the Supreme cause, the identification with the cosmic whole, the ultimate reality of one's existence. It is turning from outer experience to inner vision.

**Spirituality and Science-** Science takes as its basis empirical, repeatable observations of the natural world, and thus regards ideas that rely on supernatural forces for an explanation as beyond the purview of science. Hence for modern, academically oriented professionals, like physicians, engineers and technocrats, spirituality is a difficult subject. Science explores truth through reason-based conscious mind, while spirituality seeks truth revealed to the intuitive mind. Discovered truth and revealed truth are both truth, yet springing from two different states of mind. Putting faith in one and dicarding the other is a matter of choice.

No doubt the logical, analytical and rational approaches of the scientists have successfully brought a host of life-changing improvements in health care and technology. Our cultural tendencies based on science urge us to devalue mystery and belief, but the result is costly. We are left spiritually starved and out of balance.

We should not forget that spirituality is vital for our well being. It is the foundation of the values which are so dear to us and the seat of our trust and hope. Spirituality brings purpose and meaning to life, and as we develop in spirituality we grow in wisdom and love. We begin to experience a sense of awe a sense of connection to all of life, and a deep reverence for the Divine. Spirituality calls a human being to a life of trust and service. It involves a reverent attitude towards all things because it awakens us to a divine presence in all things.

**Spirituality in Indian life-** Dr. Radha Krishnan writes that the spiritual motive dominates life in India. Division of life in four Ashramas is an indicator to it. Vanprastha, the third Ashrama is

meant to be a preparatory step towards final renunciation. In this Ashram the couple renounces worldly attachments and spends increasingly more time in spiritual practices. Sansyasa is the final Ashrama-the fourth and the final stage of life -marked by complete renunciation and total dedication to spiritual pursuits.

Actually the East is spiritual by nature while the West is inclined towards materialism. The East seeks the world beyond. The West wants to possess this mundance world. Swami Vivekanand said that the East tends towards the domain beyond the senses, while that of the West is turned to the seeking of the sense. The East is firmly rooted in eternal Truth. The West is familiar with the transient truths of the outer world. Consequently West has become skilful in action, liveliness and dynamism and, the East has become meditative, peace-loving and indifferent to life-activities. The present urge of mankind is to synthesize these two different traits and to impart to the world at large a common, nobler and wider ideal. These two different types of virtues are complementary to each other. The body without soul is blind; the soul without body is lame. The body must be infused with the spirit of the soul, and the dynamics of the soul must manifest itself through the body. India is gradually moving up the ladder of prosperity and like West may fall into the trap of materialism. We must always remember that a nation cannot afford to be materially rich and spiritually poor.

> The trouble with not having a goal is that you can spend your life running up and down the field and never scoring.

❍❍❍

# Swami Vivekananda and Mahatma Gandhi : Truth is One, Paths are Diverse

❑ **Uma Majmudar**

One was a Hindu monk who looked like a prince, whereas the other—a British educated barrister turned politician—looked like "a half-naked fakir," as Churchill described him deridingly. The monk in the princely garb was none other than Swami Vivekananda, who mesmerized Eastern and Western audiences not only by his magnificent looks and magnetic personality, but also by the forceful delivery of his universal message of Vedanta in the last decade of the nineteenth century. The half-clad man in the loin-cloth, despite his lowly peasant garb and poor physique, came to be revered around the world as Mahatma Gandhi—the saintly politician who set India free from the imperialist British rule by launching his most powerful weapon of nonviolent resistance, called, (satya: truth, agraha: insistence).

Before delving deep into their personal backgrounds and family influences, it will be worthwhile to first examine the nineteenth century colonial Indian national environment that shaped the thoughts and responses of both Vivekananda and Gandhi. If India, under the British raj, had lost her luster and pride of who she once was—a spiritually leading nation with a vibrant culture and rich civilization—the people of India, too, had become demoralized and depressed; wallowing in self-pity and a servile mentality, they had lost faith in themselves, in their country, and in their unique ancient religious heritage of the Vedas and the Upanishads. Right around the corner, Christian missionaries were waiting in the wings, ready to pounce upon their weakened and vulnerable prey; they launched a deadly attack on Hinduism and began to convert the Hindus to Christianity.

Swami Vivekananda was born Narendranath Dutta (familiarly called "Noren") in Calcutta on January 12, 1863, in an aristocratic and highly educated Bengali Kayastha (Kshatriya caste) family. Three generations of the Duttas had been lawyers and so also was

Noren's father Vishwanath Dutta, an attorney of Calcutta High Court, who was known for his liberal religious and social outlook. Noren's mother, Bhuvaneshwari Devi, being deeply pious, practiced austerities, prayed often, and read and recited passages from the Ramayana, Mahabharata, and other sacred texts of Hinduism.

Besides being deeply religious, his mother was also intellectually inclined and participated in most family religious discussions. Later in her life, when her son had become well known as Swami Vivekananda, she accompanied him on a pilgrimage to many holy cities in India. With deep gratitude the Swami acknowledged, "The love which my mother gave to me has made me what I am, and I owe a debt to her that I can never repay." Having received from his father a strong intellectual and academic heritage, the boy Noren read voraciously on a wide variety of subjects including various sciences, religion, poetry, music, and philosophy both Eastern and Western.

Very early in life, Noren displayed a keen spiritual and scholarly interest in the ancient Hindu scriptures. Not just a bookworm, Noren proved to be equally adept in sports, in music—both instrumental and vocal—and in art and oratory. Unmistakable were his childhood gifts: a questioning mind with a rebellious spirit, a sharp memory, a thirst for knowledge, and a way with words. But above all he was deeply passionate about all things spiritual such as meditation and even renunciation of the world. As a young boy, Noren's biggest ambition was to become "a wandering monk" when he grew up.

Six years younger than Vivekananda, Mohandas Karamchand Gandhi was born in a Gujarati Vaishnava family on October 2nd in 1869 in the small seacoast city of Porbandar in the Kathiawar peninsula in western India. His father Karamchand Gandhi (Kaba for short) had earned a reputation as a man of incorruptibility, impartiality, and practical political acumen. "He had no education save that of experience;" however, "his rich experience of practical

affairs stood him in good stead in the solution of the most intricate questions and in managing hundreds of men," wrote his son Mohandas Gandhi in his Autobiography. With no religious training, Kaba Gandhi was the kind of Hindu who frequently visited temples, listened to religious discourses (katha-varta), and joined in prayer chanting and group singing (bhajan-kirtan).

Mohandas or "Moniya" was the youngest and most beloved of all the sons of his mother Putliba (ba: mother) and Kaba Gandhi. Although Vaishnavism of the Vallabhacharya tradition was Kaba Gandhi's family religion, Putliba freely observed her own faith of the Pranami sect which was a judicious blend of Vaishnavism and Islam. In addition, she also practiced some of the most austere Jain religious disciplines including severe and frequent fasting, limiting her intake of food, or giving up certain foods on religious holidays and during certain sacred months. Gandhi was brought up by this deeply religious and self-denying mother whom he adored, emulated and revered not only as a child, but also as an adult . Thus, if politics was in Gandhi's blood from his father's side, deep piety, moral scrupulosity, and an enormous capacity for austerity (tapasya) with joyful self-denial were the qualities he imbibed from his mother's living example. By his own admission, Mohandas, as a young boy, was excruciatingly shy and not particularly scholarly or talented. He had, however, a moral bent of mind, an extremely conscientious nature and an innate love for truth, which would go a long way in the making of the Mahatma.

Both Vivekananda and Gandhi were very much aware of the social, moral and religious degradation of their country in the late nineteenth century. Even before them, the great Hindu reformists, Raja Ram Mohan Roy—the founder of the Brahmo Samaj, and Dayanand Saraswati—the founder of the Arya Samaj, had taken revolutionary steps to introduce drastic reforms such as widow remarriage, the abolition of child marriages, and of the custom of "suttee" (in which a widow was encouraged, and sometimes even forced, to immolate herself on the funeral pyre of her deceased

husband). These reformists were pro-Western iconoclasts who would have nothing to do with age-old Hindu customs, superstitions, rituals and social/religious taboos. Both Vivekananda's father and grandfather were Brahmo-Samajists, but Vivekananda being an independent thinker, thought of a more creative way to purify Hinduism from within itself. Although he loved and cherished Hinduism, he did not hesitate to denounce some of the upper caste Hindus' inhuman treatment of the lower caste Hindus (shudras); he disapproved of what he called, their "don't-touchism," which Gandhi would later censure as the vice of "untouchability." Criticizing organized religion, he thundered, "If you want religion, enter not the gate of any organized religion."

What Vivekananda stood for was the essence of Hinduism, its Vedantic/Upanishadic message of the inherent divinity of man, the unity of all existence, and the validity of all religions as different paths to the same spiritual destination of truth, peace, and harmony.

Like his spiritual predecessor, Swami Vivekananda, Gandhi also loved and cherished Hinduism; but neither of them followed his tradition blindly. As Bhikhu Parekh observed in Colonialism, Tradition and Reform, "though Gandhi valued tradition, he was not a traditionalist." (1989, p. 23.) Born into Hinduism, both remained within their tradition but only as "critical traditionalists" (ibid.), who rejected whatever was irrational, inhuman or obsolete in Hinduism, such as fatalism, ritualism, sectarianism, rigid caste rules, outdated customs and superstitious beliefs or practices. Both Vivekananda and Gandhi rethought and revitalized their religion not only to purify it from within, but also to make it more contemporary so that it can withstand and cope with the new challenges of a changing world.

Once, during the mid-1920s, the great Indian scholar-philosopher, Sarvapalli Radhakrishnan, interviewed Gandhi and asked him, "What is your religion?" Gandhi answered, "My religion is Hinduism which, for me, is the religion of humanity; and it includes all the religions known to me." His response below

represents his thoroughly reasoned approach to Hinduism:

"I have found it to be the most tolerant of all religions… Its freedom from dogma…gives a votary the largest scope for self-expression. Not being an exclusive religion, it enables the followers of that faith not merely to respect all the other religions, but…to admire and assimilate whatever may be good in the other faiths. Non-violence is common to all religions, but it has found the highest expression and application in Hinduism…Hinduism believes in the oneness not of merely all human life but in the oneness of all that lives."

Although Vivekananda and Gandhi come to the podium from two opposite platforms —one of religion and the other of politics—the contents of what they said and the message they conveyed are not antithetical at all. As a Hindu monk in saffron attire, Vivekananda electrified Western audiences at the 1893 Parliament of World Religions in Chicago by teaching them the pure, distilled wisdom of Vedanta. Fast forward to the 1920s when Gandhi, even under the guise of a politician, wielded his most powerful spiritual weapon of satyagraha against the British imperial rule. To Gandhi, his use of satyagraha, both in South Africa and India, was more than a mere political technique or a tactical strategy. The whole edifice of satyagraha stood upon three spiritual pillars: truth, nonviolence, and self-suffering. Truth was the end, nonviolence the means, and self-suffering was a self-purifying discipline.

Gandhi used politics, but only as his practical work-field or karma-bhumi, to practice spirituality. He saw no dichotomy between politics and religion. Vivekananda, in contrast, shunned politics. This is evident from his vehement declaration on 27 September 1894 in Boston: "I am no politician or political agitator, I care only for the Spirit—when that is right, everything will be righted by itself." He forewarned his listeners and followers that "no political significance be ever attached falsely to my writings and sayings." Although the Swami gave no reasons for his dislike of

politics or for his non-participation in anything political, we can still suggest three underlying reasons which seem to be logically understandable: first, Vivekananda's own perception of his role as a sannyasin; second, his views about the politics of his time; and third, his unexpressed but not unlikely wish to protect his newly founded Ramakrishna Math and Mission from corrupt political influence or interference.

India under the British Raj had fallen into a deep coma; she was barely breathing and had lost everything—her individuality, her vigor, her vision, and pride in her own ancient spiritual heritage. Far worse, she had accepted her fate and totally given up even her desire to live again and to break free from foreign bondage. Likewise, the natives of India had also become impotent with fear, self-doubt, and self-pity; their backs were bent and their spirit broken. But then entered Vivekananda to shake them up and wake them up with these spirited words:

"Come up, O lions, and shake off the delusion that you are sheep; you are souls immortal, spirits free, blest and eternal; you are not matter, you are not bodies; matter is your servant, not you the servant of matter." These inspiring words of the Swami have gone down in history as a spiritual elixir with which he tried to revive the latent strength and power of the soul. Far from being other-worldly, the Swami was down to this earth; being a practical Vedantist, he exhorted the lethargic youth of his time "to be men" and "to be strong." He gave them this message of the karma yoga of the Gita:

"Be men, be strong, and work, work and work…! Our young men must be strong. Religion will come afterwards… You will be nearer to Heaven through football than through the study of the Gita… You will understand the Gita better with your biceps, your muscles, a little stronger. Yield not to unmanliness, O son of Pritha!"

If Vivekananda shook up his fellow-Indians from their deep slumber by his inspiring words, "arise, awake, and stop not till you achieve your goal," Gandhi achieved the same result, but in his own

unique way. He gave them a new, nonviolent, political-spiritual weapon of satyagraha (introduced earlier) to fight against both the enemy outside and enemy inside. Like Vivekananda, Gandhi also exhorted his fellow-Indians to stand up and fight, but to do so only nonviolently. Being a karma-yogi, Gandhi taught them by example, how to be fearless and free through nonviolent courage and by suffering for truth. To Gandhi, nonviolence was infinitely superior to violence. However, it was not the nonviolence of the weak, because to be physically strong enough to retaliate and yet choose not to retaliate required a superior kind of courage and a deeper faith in the power of truth. One must be willing to suffer and even die for truth. That Vivekananda and Gandhi were on the same wavelength regarding human service is evident from what the Swami said: "I believe in God, and I believe in man. I believe in helping the miserable;" and he added even more emphatically, "I believe in going even to hell to save others." As if forecasting his younger protege's deep identification with the poor, the Swami declared, "I do not believe in a God or religion which cannot wipe the widow's tears or bring a piece of bread to the orphan's mouth. I have nothing whatever to do with ritual or dogma; my mission is to show that religion is everything and in everything" Religion was the summum bonum of his life; there was nothing that fell outside the banner of religion. To Vivekananda, the watchword of religion must be acceptance and not exclusion; real religion will be inclusive, accepting, and respectful of all religions.

Charismatic in their own distinct ways, Vivekananda and Gandhi influenced countless people—both men and women—all around the world. Coming to America in 1893, the Swami became a pioneer—the first spiritual ambassador from the East to spread the message of Vedanta to the West. The Swami's listeners invariably commented on his powerful eyes—flashing like lightning yet kind and serene—a yogi's eyes. And those who heard him once could not stop coming back again and again, such was the magic of his thrilling voice with its rich intonations and sonorous sweetness.

The Swami's command over English, his diction, and the transformational power of his spiritual message —even one of these could have been enough, but here was a complete package including the power of his personality, his voice, his message and his spiritual serenity—which altogether left an indelible imprint upon the hearts and minds of his listeners, changing their lives forever.

That both Vivekananda and Gandhi exerted a tremendous positive influence on women is evident from the large number of their Western and Indian women disciples. Vivekananda cared deeply about improving women's subservient social status through education; he entrusted this important task to no one else but Sister Nivedita, urging her to open a special school for the women of India. He had more faith in women's self-motivation than in men's to accomplish anything better and faster. As he stated unequivocally, "With 500 motivated men it will take me 50 years to transform India, with 50 motivated women it may take only a year." Like Vivekananda, Gandhi also valued women highly as the very embodiment of shakti (spiritual power), having a greater capacity for love, endurance and suffering for truth. Not only that many women participated in Gandhi's satyagrahas, but some women like Sarojini Naidu and his own wife, Kasturba, even led some of the satyagrahas. "Gandhi was the most charismatic Indian leader of the twentieth century as Vivekananda was of the nineteenth," says B. R. Nanda[22] . His charisma, however, was not dazzling like that of his predecessor; Gandhi could not impress anyone by his voice, oratory, appearance, dress, style or by his personality. His was the charisma of a powerful yet gentle soul, an imperfect but transparently honest man, as weak and vulnerable as any ordinary human, who rose above the ordinary by his relentless striving for perfection, purity and truth.

The man who became known to the world as "Mahatma" (Great Soul) was not simple; he was complicated and full of polarities, as E. Stanley Jones, observed:

He was a meeting place of East and West, and yet he represented the soul of the East; he was an urban man who became a voice of the peasant masses; he was passive and militant, and both at the same time; he was ascetic and the servant, he was mystical and practical … the man of prayer and the man of the spinning wheel. He combined the Hindu and Christian in himself … He was serious and playful, he was the person who embodied the cause, the cause of India's freedom.

And yet, "one of the secrets of Gandhi's strength was holding in a living balance his strongly marked antithesis."

The relentless schedule of the Swami's lectures throughout America and Europe during the years 1893-96 and again 1899-1900 completely broke down his health, and before even his 40th birthday, he left this world on July 4th—his beloved America's Independence Day—in 1902. In almost four decades, he delivered to the world his profound message of Vedanta, that each one of us is potentially divine and that the goal of our life is to realize our true nature which is Divine and that the whole of existence—animate as well as inanimate—is One. As early as in the 1890s, Vivekananda was the first to talk about interfaith harmony, peace and universal spiritual brotherhood, far before it became absolutely necessary for the survival of mankind in the 20th and 21st centuries. Vivekananda and Gandhi may not have seen eye to eye on the subject of politics, but they were deeply connected at the core in their devotion to their motherland, and in their sincere concern for and service to the millions of India's miserable masses. Both of them were passionately patriotic, but their patriotism was not confined within the narrow walls of nationalism; their nationalism, being inclusive, implied internationalism. Vivekananda and Gandhi came to breathe new life into the lungs of their listless mother, India, and to rejuvenate the spirit of her children with the message of the Bhagavad Gita to "stand up and fight!" Gandhi fought, however, in his own unique way with the mightiest moral-spiritual weapon of satyagraha, based on nonviolent courage and adherence to truth.

For both Vivekananda and Gandhi, religion was not confined within the narrow boundaries of the rules and rituals, customs and caste-restrictions of one's own sect or creed. To the Swami as well as to Gandhi, nothing can be divorced from religion because religion was "the essence of existence in each man which is spirituality" and in this broad sense, it had nothing to do with dogmas and doctrines, with rituals and ridiculous argumentation over which is the correct direction or position for worshipping God. Swamiji, the great visionary, exhorted his countrymen to show by their lives that religion does not mean words or names or sects, but that it means spiritual realization.

Both the Swami and Gandhi considered religion to be the prime essence, the very lifeblood of the nation as well of all life—the aim of which was to realize God as Truth. In these inspiring words, the Swami said, "The best way to serve and seek God is to serve the needy, to feed the hungry, to console the stricken, to help the fallen and the friendless, to attend upon and serve those who are ill and require service." (Sundaram Iyer in Reminiscences) Gandhi could not have agreed more. Thus, the Monk and the Mahatma saw eye to eye in finding a common medium to serve God through serving the least of God's children. Vivekananda called them the "Daridra-Narayanas" (daridra: poor, and Narayana: God, meaning the poor as God-incarnate), and whom Gandhi called "Harijans" (Hari: God, and jana: people) or "the beloved people of God."

*[Abridged from article "Swami Vivekananda and Mahatma Gandhi: Truth Is One, Paths Are Diverse" by Uma Majmudar]*

❍❍❍

# सदस्यता फार्म

**GYAN PRABHA**
**(Quarterly)**

**ज्ञान प्रभा**
**( त्रैमासिक )**

**मै ज्ञान प्रभा का ग्राहक बनना चाहता / चाहती हूँ :**

**एक वर्ष** (One Year) रु 200/-

आजीवन सदस्य (Life Member) रु. 2000/-

**स्पष्ट शब्दों में लिखें**

नाम ......................................................................................................

(Name)

पता.........................................................................................................

(Address)

नगर.............................................पिन कोड ☐☐☐☐☐☐ राज्य.....................

(Town) (Pin) (State)

टेलीफोन नं.....................................................मोबाईल..........................................

(Ph. No.) (Mob.)

तिथि......................................................हस्ताक्षर.............................................

(Date) (Signature)

चैक नं./ ड्राफ्ट/सं.....................दिनांक...................रु..................का संलग्न है

(Cheque/D.D.No.) (Date) (Amount) (Enclosed)

(ड्राफ्ट/चैक भारत विकास परिषद् प्रकाशन दिल्ली को देय होगा)

(Payable to Bharat Vikas Parishad Prakashan at Delhi)

(भुगतान के साथ इस कूपन को भी भेजें)

## भारत विकास परिषद् प्रकाशन

भारत विकास भवन, बी डी ब्लॉक डीडीए मार्केट के पीछे, पावर हाउस मार्ग, पीतमपुरा, दिल्ली-110034

**फोन नं.: 011-27313051, 27316049**

Bharat Vikas Bhawan, Behind B D Block DDA Market,
Powerhouse Road, Pitampura, Delhi-110034